काशी सर्वप्रकाशिका

सम्पादक
नितिन रमेश गोकर्ण

संक्षिप्त ग्रन्थ परिचय

प्रस्तुत कृति के कृतिकार पं. नारायण भट्ट ने सन १५८५ में शास्त्रप्रमाणपूर्वक काशी के यथार्थ स्वरूप का 'त्रिस्थलीसेतुः' नामक मूल ग्रन्थ में वर्णन किया है।

काशी के सन्दर्भ में इतना सुन्दर प्रामाणिक कार्य अद्यावधि कही नही हुआ। उक्त ग्रन्थ में काशी-प्रयाग-गया का महत्त्व वर्णित है। उसी के काशी सम्भाग का हिन्दी अनुवाद मूल रचना के साथ पाठकों के समक्ष प्रस्तुत है। काशी के प्रसंग में विद्वान् लेखक ने ऐसा कोई भी धार्मिक या पौराणिक पक्ष नही छोड़ा जिस पर विचार करने की आवश्यकता हो। निष्कर्ष के रूप में काशी तत्त्व परम अमृत तत्त्व है और उस अमृत तत्त्व का निहितार्थ 'काशी' में ही निहित है।

वर्तमान पीढ़ी को काशी के धार्मिक एवं पौराणिक महत्त्व को अवश्य जानना चाहिये। महत्त्व को समझे बिना हम काशी को नही समझ सकते। 'नामूलं-लिख्यते किञ्चिन्नानपेक्षितमुच्यते' के सिद्धान्त को दृष्टि में रखते हुए ही काशी को सर्वप्रकाशिका के रूप में प्रस्तुत किया गया है। इसी प्रकार प्रयाग एवं गया का महत्त्व मूल भाषानुवाद मुद्रण के उपक्रम में है।

मूल पाण्डुलिपि उपलब्ध कराने एवं सम्पादन का सम्पूर्ण श्रेय कार्यपालक समिति- काशी विश्वनाथ मन्दिर के सभापति एवं वाराणसी मण्डल के लोकप्रिय आयुक्त विद्वान् श्रीमान् नितिन रमेश गोकर्ण आई.ए.एस्. को है।

प्रस्तुत पुस्तक सर्वथा संग्रहणीय एवं पठनीय है।

-प्रकाशक

रचनाकार

श्रीमन्नारायणभट्ट

काशी सर्वप्रकाशिका

(रचनाकाल-सन् १५८५)

सम्पादक

नितिन रमेश गोकर्ण आई.ए.एस्.

आयुक्त-वाराणसी मण्डल, वाराणसी।

***

अनुवादक

डॉ. गिरीश दत्त पाण्डेय

प्रकाशक

शारदा संस्कृत संस्थान

वाराणसी-२२१००२

KĀSHI SARVAPRAKĀSHIKĀ
BY
NĀRĀYAN BHATTA

(Composed in 1584 A.D.)

Edited By
Nitin Ramesh Gokarn I.A.S.
Divisional Commissioner of Vārānasi
Vārānasi, U.P.

*

Translated by-
Dr. Gireesh Dutt Pandey

Sharda Sanskrit Sansthan
Varanasi-221002

शिवसंकल्प

भूमण्डल पर प्रकाशमान काशी विश्व का प्राचीनतम जीवन्त नगरी है जो अनादि काल से सनातन धर्म की सांस्कृतिक राजधानी के रूप में प्रख्यात रही है। काशी की स्तुति को ऋषि-मुनियों, साधु संतों ने अनेक शताब्दियों से विभिन्न आध्यात्मिक ग्रन्थों के माध्यम से वर्णित किया है। आस्था के केन्द्र के रूप में हजारों साल तक काशी का वर्णन विभिन्न ग्रन्थों, पुराणों आदि में होने की एक लम्बी शृङ्खला रही है। वाराणसी के संस्कृत विद्वानों का इतिहास भी उतना ही प्राचीन है और उनकी कृतियों से ही काशी नगरी सम्पूर्ण भारत में विद्वानों के लिये आकर्षण का केन्द्र बिन्दु बनी रही। भारतवर्ष के विभिन्न प्रदेशों से विद्वानों का आगमन काशी में हुआ तथा उन्होंने शास्त्रों के सिद्धान्तों को शास्त्रार्थ के माध्यम से प्रतिपादित कर ख्याति अर्जित की।

"काशी का इतिहास" में डॉ. मोतीचन्द मानते हैं कि जिस महान् पंडित ने काशी के धर्म और संस्कृति के उत्तर भारतीय सिद्धान्तों के विरुद्ध हिन्दू संस्कृति और जीवन के दक्षिणी मत का प्रतिपादन किया उसका नाम नारायण भट्ट है। महामहोपाध्याय हरप्रसाद शास्त्री के अनुसार नारायण भट्ट के पिता रामेश्वर भट्ट पैठन, महाराष्ट्र के निवासी थे। जिनकी विद्वत्ता उन्हें निजाम शाह और कृष्णदेव राय तक भी ले जा चुकी थी। नारायण भट्ट का जन्म १५१४ ईस्वी में द्वारिका यात्रा के दौरान हुआ जिसके बाद रामेश्वर भट्ट काशी आये और यहाँ सदा के लिये बस गये। उनके तीनों पुत्रों का विवाह भी काशी में हुआ और नारायण भट्ट का परिवार तीन सौ वर्ष तक काशी के प्रकाण्ड पण्डितों के केन्द्र में रहा।

नारायण भट्ट ने उत्तर भारत के कई पण्डितों के साथ शास्त्रार्थ किया जिसमें उन्हें लगातार विजयश्री प्राप्त हुयी। उनके प्रसिद्ध शिष्यों में ब्रह्मेन्द्र सरस्वती, नारायण सरस्वती, उपेन्द्र शर्मा, मधुसूदन सरस्वती व नवद्वीप के विद्यानन्द आदि प्रमुख रहे जिनके स्वयं के रचित कई संस्कृत ग्रन्थ हैं। नारायण भट्ट ने धर्मप्रकृति और प्रयोगरत्न नामक दो ग्रन्थ स्मृतियां एवं वृत्तरत्नाकर ग्रन्थ पर अति प्राचीन सुप्रसिद्ध 'नारायणी' टीका भी प्रकाशित है। इसके अलावा आउफ्रेक्ट ने उनके २८ ग्रन्थों का उल्लेख किया है।

नारायण भट्ट के समय के भारत वर्ष की पंडित मण्डली उन्हें अपना संरक्षक मानने लगी। उनके सबसे बड़े पुत्र रामकृष्ण के पौत्र गागा भट्ट थे। जिन्होंने अपने पिता दिवाकर भट्ट की अधूरी स्मृतियाँ पूर्ण कर जैमिनिसूत्र पर शिवार्कोदय नाम की टीका की। उन्हीं की विद्वत्ता और व्यवस्था से छत्रपति शिवाजी महाराज का राज्याभिषेक रायगढ़ में सम्पादित कर हिन्दवी स्वराज्य की स्थापना की गई। गागाभट्ट के उत्तराधिकारी नागोजि भट्ट हुए जिन्होंने संस्कृत के कई शाखाओं पर टीकाएँ लिखी और अनेकों ग्रन्थ लिखे। नारायण भट्ट का देहान्त १५९५ ई. में हुआ परन्तु उनके वंशजों ने काशी में विद्वत्ता का क्रम जारी रखा जिसका उल्लेख १७८७ ई. में काशी के पण्डितों ने वारेन हेस्टींग्स को दिया जिसमें १७८ महाराष्ट्रीय और गुजराती पण्डितों के हस्ताक्षर हैं।

त्रिस्थलीसेतु की रचना १५८५ ई. में नारायण भट्ट ने प्रयाग, काशी और गया पर उस समय तक के लिखे गये सभी शास्त्रों एवं पुराणों का अध्ययन कर सप्रमाण विधि का विस्तृत विवरण किया। इसी ग्रन्थ के आधार पर सम्पूर्ण भारत में इन तीर्थ स्थलों की ख्याति हुई और इन तीर्थ यात्राओं के क्रम को बढ़ावा मिला। उत्तर भारत में मुगल साम्राज्य के क्षीण होने और मराठों के आगमन के बाद काशी में १७३५ से १७८० ईस्वी के कालखण्ड में पेशवा, होल्कर, शिंदे आदि ने कई घाट, मंदिर, ब्रह्मपुरी आदि का निर्माण काशी में कराया। वर्तमान श्री काशी विश्वनाथ मंदिर का निर्माण महारानी अहिल्याबाई होल्कर द्वारा १७८० ई. में कराया गया। मराठों का त्रिस्थली क्षेत्र में अपना आधिपत्य स्थापित करने की चाहत तो रही परन्तु उसे कभी पूरा नहीं कर सके और १७६१ ईस्वी के पानीपत के तीसरे युद्ध के बाद यह चाहत भी समाप्त हो गई।

अकबर के शासनकाल में विश्वनाथ मंदिर बनाने का श्रेय श्री नारायण भट्ट और राजा टोडरमल को है जिसे डॉ. अल्तेकर द्वारा १५८५ ई. के करीब सम्पादित होना बताया गया है। राजा टोडरमल के १५८० ईस्वी में मुंगेर के विजय के बाद विश्वनाथ मंदिर का नक्शा नारायण भट्ट ने राजा टोडरमल को दिया जिसे बनवाने में राजा टोडरमल ने वित्तीय प्रबन्ध किया और नारायण भट्ट ने अविमुक्त क्षेत्र वाराणसी में विधिपूर्वक विश्वेश्वर की स्थापना की।

त्रिस्थलीसेतु की रचना नारायण भट्ट ने संस्कृत में की है परन्तु वर्तमान में सर्वथा दुर्लभ है। संस्कृत भाषा से हिन्दी में अनुवाद कर हिन्दीभाषी वर्तमान पीढ़ी को सोलहवीं शताब्दी के काशी की सांस्कृतिक विरासत को समझने की आशा से श्री विनोदराव पाठक से मेरे द्वारा आग्रह किया गया। उन्होंने इसे सहर्ष स्वीकार किया और **त्रिस्थलीसेतु** के काशी खण्ड पर आधारित **काशी सर्वप्रकाशिका** को

प्रकाशित कराकर समस्त श्रद्धालुओं को समर्पित किया। एतदर्थ वे धन्यवाद के पात्र है।

आशा है कि इस पुस्तक का अनुवाद भविष्यमें अन्य भारतीय भाषाओं तथा अंग्रेजी में भी किया जायेगा ताकि नारायण भट्ट द्वारा रचित इस अमूल्य धरोहर को आधुनिक युवा पीढ़ी पढ़ कर अपनी विरासत के बारे में जानकारी हासिल कर सके।

तमसो मा ज्योतिर्गमय। असतो मा सद्गमय।
मृत्योर्मा अमृतं गमय।

सर्वे भवन्तु सुखिनः सन्तु सर्वे निरामयाः।
सर्वे भद्राणि पश्यन्तु मा कश्चिद्दुःखभाग् भवेत्।।

।। इति शिवम् ।।

नितिन रमेश गोकर्ण
मण्डलायुक्त वाराणसी/सभापति
कार्यपालक समिति,
श्रीकाशी विश्वनाथ मन्दिर, वाराणसी।

गुरुवार, २६ अक्टूबर, २०१७
कार्तिक शुक्ल षष्ठी, वि.सं.२०७४

पुरोवाक्

बाबा विश्वनाथ की अनादि राजधानी काशी अपौरुषेय एवं आर्षमनीषा का ज्योतिस्तम्भ है। वेदों, पुराणों, स्मृतियों, रामायणों, महाभारत, तन्मूलक काव्यों में 'काशी' की अपार महिमा श्रुत एवं स्मृत है। काशी अनादिकाल से भूमण्डल में ज्ञान-विज्ञान का केन्द्र है। 'काशी' शब्द ही आधिभौतिक, आधिदैविक एवं आध्यात्मिक प्रकाश की शक्ति का बोधक है। अनन्तकोटिब्रह्माण्डनायक शिवकी सर्वप्रकाशिका आत्मज्योति परमान्तरङ्गा शक्ति 'काशिका' अथवा 'काशी' है। काशी ब्रह्मज्योति रूप में निर्गुण निराकार तथा मूर्त्ति रूप में विग्रहवती है। काशी शब्द में 'ई' अक्षर शिलष्ट है जो शिव की चिच्छक्ति का व्यंजक है। 'य ईं शृणोति' श्रुति में चिदाह्लादिनी शक्ति का संकेत है। श्रीविद्या-सर्वस्वभूता, ब्रह्म की परमान्तरंगा शक्ति, पञ्चक्रोशान्तरस्थिता पराम्बा का श्रीविग्रह 'काशी' है। यहाँ का मरण भी महामङ्गलप्रद है। 'काशी' शब्द स्वयं मन्त्रात्मक है। 'ई' परमानन्द तत्त्व है। उसी परमानन्दसुधासागर के सौरस्यामृत का सतत प्रकाशन करने वाली शक्ति शिवशक्त्यभिन्ना निर्विशेषा है, तत्त्व की प्रकाशिका महाश्मशानविग्रहा काशी है, यह तथ्य विश्वनाथ द्वारा आद्यशङ्कर भगवत्पाद को प्रदत्त आशीर्वाद से स्पष्ट है। विश्व में 'महाश्मशान' से बढ़कर पवित्र कुछ भी नहीं है। श्मशानों की स्वाभाविक अपवित्रता का व्यावर्त्तक महाशब्द है। आनन्द का आनन ही 'आनन्दकानन' है। समस्त प्राणियों के परमानन्द का अधिष्ठान महाश्मशान काशी शक्त्यवच्छिन्न शिव का विग्रह है। यह अजरामरा है। सृष्टि से प्रलय पर्यन्त इसकी स्थिति अपरिवर्तित रहती है। जाबाल श्रुति के सन्दर्भ से यह तथ्य स्पष्ट है।

कूर्ममहापुराण में काशी के स्वरूप के सम्बन्ध में कहा है-

तत्र साक्षान् महादेवो देहान्ते स्वयमीश्वरः।
व्याचष्टे तारकं ब्रह्म तथैवैकं विमुक्तिदम्।।
यत्तत्परवरं तत्त्वमविमुक्तमिति स्मृतम्।
एकेन जन्मना देवि वाराणस्यां तदाप्नुयात्।। १।३१।६०

स्वामी रामकृष्ण परमहंस को समाधि की अवस्था में मणिकर्णिका श्मशान पर इसका दर्शन हुआ था। आदित्य पुराण के अनुसार-

यत्र विश्वेश्वरो देवः सर्वेषामेव देहिनाम्।
ददाति तारकं ज्ञानं संसारान् मोचकं परम्।।

इसका उद्धरण त्रिस्थली सेतुकार ने भी दिया है। 'काशी' 'वाराणसी' 'रूद्रावास'

आदि शब्द मन्त्रमय हैं। कहा भी है–

वाराणसीति काशीति महामन्त्रमिदं जपन्।
यावज्जीवं त्रिसन्ध्यं तु जन्तुर्जातु न जायते।।
काशी काशीति काशीति, बहुधा संस्मरन् द्विजः।
न पश्यतीह नरकान्, वर्तमानान् स्वयं कृतान्।।
काशीति वर्णद्वितयं स्मरंस्त्यजति पुद्गलम्।
यत्र क्वापि भवेत्तस्य कैलाशे वसतिः स्फुटा।।

काशी, वाराणसी, अविमुक्त, अन्तर्गृह इन चारों में मृत्यु से क्रमशः सालोक्य, सारूप्य, सायुज्य एवं कैवल्य मुक्ति प्राप्त होती है। काशी में सूच्यग्रमात्र भी ऐसा स्थान नहीं है जहाँ मरने से मुक्ति प्राप्त न हो सकें।

कृत्यकल्पतरु, तीर्थचिन्तामणि, त्रिस्थलीसेतु, वीरमित्रोदय स्कन्दपुराणादि ग्रन्थों में काशी, वाराणसी, अविमुक्त एवं अन्तर्गृह क्षेत्रों की मुक्तिदायिनी शक्ति का वर्णन है। काशी का नामस्मरण भी मोक्षप्रद है। आज भी काशी, वाराणसी, अविमुक्त एवं अन्तर्गृही यात्रायें लाखों आस्तिकों द्वारा सम्पन्न की जाती है।

तीर्थयात्राओं एवं तीर्थो में वास की परम्परा भारतवर्ष में अनादिकाल से चली आ रही है। तीर्थयात्राओं से भारतवर्ष की धार्मिक एवं सांस्कृतिक एकता की भावना का विस्तार होता है। परान्न, परद्रव्य, परस्त्री एवं परस्वत्व का अपहरण हिन्दू के स्वभाव में नहीं है। मनु, इक्ष्वाकु, ययाति, मान्धाता, दिलीप, राम, युधिष्ठिर, परीक्षित आदि सम्राटों ने कभी भी भारतवर्ष के बाहर अपना अधिकार स्थापित करने का कभी प्रयत्न ही नहीं किया। सभी 'नवहजारयोजन' के देवनिर्मित भूखण्ड को अपनी मातृभूमि मानते रहे।

'वाराणसी वैभव' लेखक पं.कुबेरनाथ सुकुल के पुस्तकानुसार सिकन्दर लोदी ने सन् १४९४ ई. में सभी मन्दिरों को तोड़ा। विश्वेश्वर का मन्दिर भी टूटा। इस स्थिति का वर्णन पं. नारायण भट्ट ने (१५८५) में किया है–

अत्र यद्यपि विश्वेश्वरलिङ्गं कदाचिदपनीयते, अन्यदानीयते च कालवशात् पुरुषैस्तथापि तत्स्थानस्थितेस्मिँन् कस्मिँश्चित् पूजादिकार्यम्। मुख्यविश्वेश्वर ज्योतिर्लिङ्गाभावेऽपि, तत्स्थानस्थिते लिङ्गान्तरे पूजादिकार्यम्। यद्यपि म्लेच्छादिदुष्ट-राजवशात् तस्मिन् स्थाने किञ्चिदपि लिङ्गं कदाचिन्न स्यात् तदापि प्रदक्षिणा-नमस्काराद्याः स्थानधर्मा भवन्त्येव। तावतैव च नित्ययात्रासिद्धिः स्थापनादयस्तु साधिष्ठाना न भवन्तीति निर्णयः। एवं लिङ्गान्तरे प्रतिमान्तरे च सर्वत्र ज्ञेयम्। विश्वेश्वरादिष्वपि अयमेव पूजाप्रकारो विज्ञेयो विशेषानुक्तौ। तदुक्तौ तु स एव।

इसी प्रकार वीरमित्रोदय (१६२०ई.) मे भी कहां गया है-

अत्र च स्वयंभूतस्य लिङ्गस्यालाभे, तत्स्थाने स्थापितलिङ्गान्तरपूजनादपि सर्वनिर्वाहः। दुर्दान्तम्लेच्छादिवशात्तत्र लिङ्गाभावे स्थानप्रदक्षिणेनैव नित्ययात्रा सिद्ध्यतीति स्नपनादिकं तु तदा निरधिष्ठानत्वादभिवर्त्तत इति शिष्टाः।

इस प्रकार काशी में हिन्दुओं के धार्मिक स्वत्व की रक्षा में महाराष्ट्र के विद्वान् ब्राह्मणों का योगदान अविस्मरणीय है। विद्या, आचार एवं नीति के अनुष्ठान में महाराष्ट्र के तपस्वी विद्वान् सर्वदा अग्रणी रहे और आज भी है। 'त्रिस्थलीसेतु' के निर्माता पं.नारायण भट्ट राजा टोडरमल के गुरु भी थे। राजा टोडरमल ने पं. श्री नारायण भट्ट के आग्रह पर १५८५ में भव्य विश्वेश्वर मन्दिर का निर्माण करवाया। उसी समय बिन्दुमाधव मन्दिर का निर्माण राजा मानसिंह ने करवाया। अकबर का शासन १५५६ ई.-१६०५ ई.) हिन्दुओं के लिये थोड़ा सुखद रहा। त्रिस्थलीसेतुकार पण्डितराज नारायण भट्ट का भी यह काल है। उन्होंने ही टोडरमल द्वारा निर्मित विशाल एवं भव्यतम विश्वनाथ मन्दिर की प्राणप्रतिष्ठा यज्ञ का आचार्यत्व सम्पन्न किया था। उस समय के सन्तों सूरदास, तुलसीदास आदि ने भक्ति आन्दोलनों एवं साहित्यादि के माध्यम से हिन्दू धर्म की रक्षा में अपूर्व योगदान किया। सन्तशिरोमणि गोस्वामी तुलसीदास ने काशी में चौबीस मूर्तियाँ स्थापित की थीं। उनमें संकटमोचन मन्दिर प्रसिद्ध है। बंगाल की रानी भवानी ने भी अनेक देवालयों का निर्माण कराया।

पं.कुबेरनाथ सुकुल के मतानुसार सन् १६६९ में टोडरमल एवं मानसिंह द्वारा निर्मित भव्यतम मन्दिरों को तोड़कर मस्जिदों का निर्माण किया गया। ज्ञानवापी की मस्जिद औरंगजेब द्वारा निर्मित है। आलमगीरी मस्जिद हरतीरथ मुहल्ले में सबसे पहले बनी। यह कृत्तिवासेश्वर मन्दिर को तोड़ कर बनायी गयी है। औरंगजेब ने चार मस्जिदें बनवा दी जिनमें से तीन तो मन्दिरों को तोड़कर बनायी गयी है।

औरंगजेब के पश्चात् मुगल सत्ता शिथिल हो गयी। दक्षिण में मराठों का उत्त्कर्ष भी बढ़ा और वे दिल्ली तक प्रभावी रहे। गंगापुर, काशी में जन्मे महाराज बलवन्त सिंह भी प्रभावी हुए। अतः १७०८ ई. के बाद काशी पर धार्मिक अत्याचार नहीं हुआ। पुराने मन्दिरों का जीर्णोद्धार तथा पुनर्निर्माण द्रुत गति से होने लगा। इन्दौर की महारानी अहिल्याबाई तथा प्रायः सभी मुख्य मराठा सरदारों का बहुत बड़ा योगदान है। विश्वेश्वर, अन्नपूर्णा, काल भैरव, त्रिलोचन, साक्षी विनायक आदि अनेकानेक मन्दिर तथा गंगाघाट मराठों ने बनवायें तथा अनेक घाटों का जीर्णोद्धार किया है। ज्ञानवापी के निकट का मुक्ति मण्डप भी महाराष्ट्रीय वीरों की ही देन है। इस प्रकार काशी की धार्मिक, सांस्कृतिक परम्परा एवं विद्या की रक्षा एवं प्रतिष्ठा में महाराष्ट्र के वीरों के संघर्ष एवं योगदान को कौन भूल सकता है? महाराष्ट्र के द्विज शस्त्र एवं शास्त्र दोनों में प्रवीण थे

और हैं भी। महाकवि स्व. गणेश त्र्यम्बक शेवडे ने देवदेवेश्वर महाकाव्य में लिखा है-

राजन्यवंशे प्रलयाग्निदग्धे कृपाकटाक्षात् भृगुवंशकेतोः।
द्विजा महाराष्ट्रभवा वहन्ते शास्त्रे च शस्त्रे च समं पटुत्वम्।।

उक्त कथन महारानी लक्ष्मी बाई में प्रत्यक्ष भासित होता है।

महाराष्ट्र के द्विजों का काशी पदार्पण सोलहवीं शताब्दी में हुआ। महाराष्ट्र के कुछ ब्राह्मण विद्वान् काशी में आ कर बसे। उन्होंने वेदपाठ और कर्मकाण्ड को प्रवर्तित किया। हिन्दू धर्म पर अत्याचार होता रहा किन्तु **'न दैन्यं न पलायनम्'** के अनुसार हिन्दू पुनः उठ खड़ा हुआ। पं. नारायण भट्ट ने त्रिस्थली सेतु में 'आचारनिष्ठा' के साथ तीर्थयात्रा एवं तीर्थवास को जोड़कर निर्धन, गरीब मानवों का महान् उपकार किया है क्योंकि वे दीर्घकाल साध्य एवं बहुव्ययसाध्य यज्ञ कर नहीं सकते। अतः तीर्थदर्शन, तीर्थयात्रा आदि से कोटि अश्वमेधादि के फलों का उद्घोषण करके उन्हें भी परमपुरुषार्थ मोक्ष की प्राप्ति में निराशा को समाप्त कर प्रगाढ़ आशा का संचार किया तथा स्वधर्माचरण में निष्ठापूर्वक मृत्युवरण को भी श्रेयस्कर घोषित किया। संक्षेप में, त्रिस्थलीसेतु ने तीर्थ के व्याज से सनातन धर्म के **'मामनुस्मर युद्धय च'** के परमोदार रहस्य का उद्घाटन करके महान् उपकार किया है। ऐसे महान् क्रान्तदर्शी महाराष्ट्र द्विजकुलकमलदिवाकर के चरणारविन्द में शत-शत-वन्दन, नमन एवं प्रणाम।

प्रस्तुत त्रिस्थलीसेतुः (काशी-प्रयाग-गया) यह प्रति सर्वत्र सुलभ नहीं रही। प्रायः पाँच सौ वर्ष प्राचीन साहित्य को उपलब्ध कराने का सम्पूर्ण श्रेय विद्यानुरागी, सतत शास्त्रचिन्तनशील काशी-विश्वनाथ-गंगा के ऐतिह्य पर सम्पूर्ण गवेषणाकार्य में निरन्तर प्रवृत्तिशील तथा जिन पर उक्त त्रितय की महती अनुकम्पा रहती है एवं है भी, ऐसे वाराणसी मण्डल के लोकप्रिय आयुक्त एवं सभापति-कार्यपालक समिति, काशी विश्वनाथ मन्दिर, वाराणसी के श्रीमान् नितिन रमेश गोकर्ण (आई.ए.एस्.) को है। शारदा संस्कृत संस्थान उनके प्रति कृतज्ञता व्यक्त करता है। सौभाग्य से उसके काशी खण्ड की यह कृति सामान्य जनोपयोगी हो, एतावता इसका सम्पादन एवं हिन्दी भाषान्तरण (मूलानुरूप) लोकोपकार की भावना से प्रकाशित किया जा रहा है। इस प्रामाणिक कृति के प्रकाशन का सारा श्रेयप्रेय श्रीयुत गोकर्ण जी को है।

काशी सर्वप्रकाशिका को सामान्यजनोपयोगी बनाने में मेरे अभिन्न सुहृद्वर तथा शास्त्रपुरुष पं.गिरीश दत्त पाण्डेय जी का अवदान सर्वथा अविस्मरणीय है एवं रहेगा। मैं डॉ. पाण्डेय जी के प्रति हार्द आधमर्ण्य व्यक्त करता हूँ। इसी सदाशय के साथ।

शारदाभवन
डी.३६/४४ अगस्त्यकुण्ड, वाराणसी-२२१००१

विनोदराव पाठक
प्रकाशक

विषय-सूची

***

समर्पणम्

त्वदीयं वस्तु गोविन्द ! तुभ्यमेव समर्पये।

काशी सर्वप्रकाशिका

काशी सर्वप्रकाशिका

।। अथ काशीप्रकरणम् ।।

भवानीशङ्करं नत्वा भट्टरामेश्वरात्मजः।
भट्टनारायणः काशीं विविनक्ति सदुक्तिभिः।।१।।

भवानी-शङ्कर को प्रणाम कर के (मैं) भट्टरामेश्वर का पुत्र नारायण भट्ट सदुक्तियों के अनुसार काशी का विवेचन कर रहा हूँ (है)।।१।।

तत्र माहात्म्यज्ञानस्य प्रवृत्त्यौपयिकत्वेन तस्यावश्यं वक्तव्यत्वात्तदेव प्रथमं निरूप्यते। अत एव पद्मपुराणे पातालखण्डे भृगुं प्रति ऋषिकृतेषु पञ्चप्रश्नेषु प्रथमं माहात्म्यप्रश्न एव कृतः-

किं माहात्म्यं कथं वेद्यं सेव्या कैश्च द्विजोत्तम।
परिमाणं च तस्याः किं केनोपायेन लभ्यते।।२।।

इस प्रसङ्ग में माहात्म्यज्ञान की प्रवृत्ति में उपयोगिता होने के कारण उसका विवेचन आवश्यक होने से प्रथमतः उसी का विवरण प्रस्तुत है। इसीलिये पद्मपुराण के पाताल खण्ड में भृगु से ऋषि द्वारा किये गये पाँच प्रश्नों में प्रथम प्रश्न माहात्म्य के विषय में ही है-

हे द्विजश्रेष्ठ! 'वाराणसी की क्या महिमा है? उसका ज्ञान कैसे हो? काशी का सेवन कैसे करें? उसका क्षेत्रविस्तार क्या है? वह (काशी) किस उपाय से प्राप्त होती है?।।२।।

तत्र स्कान्दे-वाराणसी महापुण्या त्रिषु लोकेषु विश्रुता।
अन्तरिक्षे पुरी सा तु मर्त्यलोकस्य बाह्यतः।।३।।

पञ्चक्रोशान्तरे राजन् ब्रह्महत्या न सर्पति।
अष्टाविंशतिकोट्यस्तु लिङ्गानां तत्र भारत।।४।।

इस क्रम में स्कन्द महापुराण में कहा है-

वाराणसी अतिपुण्या है। वह त्रैलोक्य में प्रसिद्ध है। वह पुरी अन्तरिक्ष में अवस्थित है तथा मृत्युलोक से बाहर है। हे राजन् पाँच कोस के अन्दर ब्रह्म हत्या का प्रवेश नहीं होता है और उस पुरी में अट्ठाईस करोड़ लिंग विद्यमान है।।३-४।।

मात्स्ये- **वाराणसीति भुवनत्रयसारभूता**
धन्या सदा मम पुरी गिरिराजपुत्रि।
अत्राऽऽगता विविधदुष्कृतकारिणोऽपि
पापक्षयाद् विरजसः प्रतिभान्ति मर्त्याः।।५।।
एवं स्मृतं प्रियतमं मम देवि नित्यं
क्षेत्रं विचित्रतरुगुल्मलतासुपुष्पम्।
अस्मिन्मृतास्तनुभृतः पदमाप्नुवन्ति
मूर्खागमेन रहितास्तु न संशयोऽत्र।।६।।

मत्स्यपुराण में पार्वती से शङ्करजी कहते हैं-

वाराणसी सदा सर्वदा धन्य तथा त्रैलोक्यसारसर्वस्व मेरी पुरी है। विविध प्रकार के दुष्कर्म करने वाले सभी मनुष्य यहां सभी पापों का क्षय हो जाने के कारण निर्मल, परम पवित्र हो जाते हैं। मेरी इस परम पवित्र, विचित्र वृक्ष-लता-गुल्म-पुष्पों से मण्डित पुरी (क्षेत्र) की स्मृति भी अत्यन्त प्रिय है। इस (काशी) में जो भी देहधारी मरते हैं वे अज्ञान से मुक्त होकर उत्तम स्थान प्राप्त कर लेते हैं, इसमें कोई भी संशय नहीं है।।५-६।।

लैङ्गे- **भूर्लोके चान्तरिक्षे च दिवि तीर्थानि यानि च।**
अतीत्य वर्तते सर्वाण्यविमुक्तं स्वभावतः।।७।।
क्षेत्रं तीर्थोपनिषदमविमुक्तं न संशयः।

लिङ्ग महापुराण में कहा गया है-

मृत्युलोक, अन्तरिक्ष एवं स्वर्ग में जितने भी तीर्थ हैं उन सभी का

अतिक्रमण करते हुए यह अविमुक्त (काशी) स्वाभाविक रूप से विद्यमान है अर्थात् त्रैलोक्य के समस्त तीर्थों में अविमुक्त क्षेत्र काशी स्वाभाविक रूप से श्रेष्ठ है।।७।।

तीर्थरहस्यमित्यर्थः।

सभी तीर्थों में अविमुक्तक्षेत्र काशी परम रहस्य रूप है।

माघे सर्वाणि तीर्थानि प्रयागमभियान्ति हि।।८।।
काशीस्थितानि तीर्थानि मुने यान्ति न कुत्रचित्।।९।।

माघ मासमें सभी तीर्थ प्रयाग में जाते हैं। किन्तु काशी में विद्यमान तीर्थ कहीं भी नहीं जाते हैं।।८-९।।

तथा- **इदं गुह्यतमं क्षेत्रं सदा वाराणसी मम।**
सर्वेषामेव जन्तूनां हेतुर्मोक्षस्य सर्वदा।।१०।।

और- यह मेरी वाराणसी नगरी परम गोपनीय रहस्यमयी एवं सभी प्राणियों के मोक्ष का नित्य कारण है।।१०।।

पाद्मे भटान्प्रति यमः-

पद्मपुराण में यमराज अपने सेवकों से कहते हैं-

प्राणप्रयाणावसरे ये काश्यां संगता जनाः।
ये वा काशीति भाषन्ते ये वा विष्णुपरायणाः।।११।।
ये वा महादेवरता ये वा सत्तीर्थमृत्यवः।
तेषां नाहं प्रभुः क्वापि त्याज्या युष्माभिरेव ते।।१२।।

प्राणनिष्क्रमण के समय जो काशी में आ जाते हैं, जो 'काशी' का उच्चारण करते हैं, जो विष्णुभक्त हैं, जो महादेव के प्रति अनुरक्त हैं अथवा पवित्र तीर्थों में शरीर त्यागते हैं। मैं उनका स्वामी नहीं हूँ। आप उन्हें छोड़ दें।।११-१२।।

ब्रह्मवैवर्ते- **कालाद्भयं नास्ति यत्र यत्र पापमयं न हि।**
जन्मान्तरसहस्त्रेषु कृतं नश्यति दर्शनात्।।१३।।
तत्क्षेत्रमहिमानं कः सम्यग्वर्णयितुं क्षमः।
अन्यत्रैव मृतानां तु जीवानां कीकसं यदि।।१४।।

वाराणस्यां प्रपतति नरके न पतन्ति ते।
स्वर्गं दुष्कृतिनः पापा अपि गच्छन्ति नान्यथा।।१५।।

ब्रह्मवैवर्त्त पुराण में कहा है-

जहाँ काल का भय नहीं है, जहाँ पापों का भी भय नहीं है, जिसके दर्शन मात्र से हजारों जन्मों के पाप नष्ट हो जाते हैं, उस क्षेत्र की महिमा का पूर्णतः वर्णन करने में कौन समर्थ है? अन्यत्र मरने पर भी जीवों के देह का कोई भी अंश (हड्डी या राख) वाराणसी में छूट जाय तो वे नरक में नहीं गिरते हैं। दुष्कर्मी पापी भी स्वर्ग प्राप्त कर लेते हैं। यह तथ्य अन्यथा नहीं है।।१३-१५।।

कीकसमस्थि। कीकस = अस्थि।

अस्थि केशा नखा मांसं येषां काश्यां पतेदिह।
महापापास्तदा स्वर्गं यान्ति साहस्रवत्सरान्।
पुनः काशीं समासाद्य मुक्ताः स्युः सर्वजन्तवः।।१६।।

जिनके हड्डी, केश, नख, मांस काशी में पतित हो जाते हैं वे महापापी भी हजारों वर्षों तक स्वर्ग में वास करते हैं। पुनः काशी में जन्म प्राप्त करके सभी प्राणी मुक्त हो जाते हैं।।१६।।

पाद्मे- **मारुतेरितकाशीस्थरेणुयोगेन किल्विषम्।**
दूरीभवति ब्रह्मर्षे नात्र कार्या विचारणा।।१७।।

पद्मपुराण में कहा गया है-

हे ब्रह्मर्षि!! वायुप्रेरित काशी की धूलि कणों के योग से पाप दूर हो जाते हैं। इस पर सन्देह नहीं करना चाहिए।।१७।।

तथा- **काशीवासी क्षुत्कृशः पुल्कसोऽपि**
श्रेष्ठो राजन्मुक्तिकन्यावृतो यत्।
अन्यत्रस्थः सार्वभौमः स्वधर्मी
न स्याच्छ्रेष्ठो गर्भभावैकयोग्यः।।१८।।

हे राजन्! काशी में रहने वाला भूखा, कृश, चाण्डाल भी मुक्तिरूपिणी कन्या से घिरा होने के कारण, अन्यत्र रहने वाले सार्वभौम स्वधर्मनिष्ठ राजा

से भी श्रेष्ठ है। राजा तो पुनः गर्भ में वास करता है। किन्तु काशीवासी लघुत्तम प्राणी को पुनः गर्भवास का दुःख नहीं होता क्योंकि वह मुक्त हो जाता है।१८।

तथा- **अन्यत्रापि प्रमीतानां श्राद्धं श्रद्धासमेधितम्।**
अत्र दीयेत तेन स्यात्तेषां कैलाससंगमः।।१९।।
अत्र सङ्ग्राममध्ये ये प्राणांस्त्यक्ष्यन्ति शस्त्रिणः।
एतासां ते विषयगा न भविष्यन्ति वासव।।२०।।

और, काशी से अन्यत्र मरने वालों का काशी में श्रद्धा पूर्वक व श्राद्ध दान किया जाय तो उनका कैलाश वास हो जाता है। यहाँ (काशी में) जो शस्त्रधारी युद्ध में मरते हैं वे अप्सराओं के क्षेत्र (स्वर्ग) में नहीं किन्तु मोक्ष के अधिकारी हो जाते हैं।।१९-२०।।

एतासामप्सरसाम्।।

तथा- **जन्मान्तरसहस्त्रेषु विहितैर्धर्मकर्मभिः।**
महादेवार्पितैः सा हि प्राप्या वैश्वेश्वरी पुरी।।२१।।
शंभोरनुग्रहादेव शंकराराधनोत्थितात्।
तत्क्षेत्रं प्राप्यते विप्रा नान्यैः साधनकोटिभिः।।२२।।
नैतत्क्षेत्रसमं किंचित्त्रिषु लोकेषु विद्यते।
अधिकं वा मुनिश्रेष्ठाः सत्यमेतद्ब्रवीमि वः।।२३।।

विप्रों!! हजारों जन्मान्तरों में शास्त्रविहित, महादेव के चरणों में समर्पित धर्म कर्मों के फलस्वरूप विश्वेश्वर की नगरी प्राप्त होती है। शङ्कर की आराधना से अधिगत महादेव की कृपा से ही काशी क्षेत्र की प्राप्ति सम्भव है, करोड़ों साधनान्तरों (दूसरे उपायों) द्वारा नहीं। इस क्षेत्र के समान अन्य कोई भी क्षेत्र तीनों लोकों में नहीं है। इस क्षेत्र से श्रेष्ठ कोई क्षेत्र तीनों लोकों में नहीं है। हे महर्षियों!! मैं आप लोगों से सत्य कहता हूँ।।२१-२३।।

ब्रह्मवैवर्ते-वाराणस्यां स्वल्पमपि प्रायश्चित्तं महाघहृत्।

तथा- **न काशिकायां पतितोऽपि धर्मकृद्-**
दुःखं समाप्नोति मम प्रसादात्।

इति प्रतिज्ञा जगदीश्वरस्य
महानुभावस्य शिवस्य नित्या ।।२४।।
काश्यां प्रदीपः प्रभया प्रकाशितः
पापान्धकारः खलु नाशमेति ।
विश्वेशदेहोद्भवया सुविद्यया
महात्मनां पुण्यकृतां कृतात्मनाम् ।।२५।।

ब्रह्मवैवर्त्त प्रसंग के अनुसार-

वाराणसी में किया गया स्वल्पतम प्रायश्चित भी महापापों का हरण करने वाला है तथा धर्माचरण करने वाला पतित प्राणी भी काशी में मेरे (शङ्कर) प्रसाद से दुःख नहीं पाता, यह जगत् के अधीश्वर महानुभाव देवाधिदेव शङ्कर की नित्य प्रतिज्ञा है। काशी में प्रकाशित ज्ञानप्रदीप से पाप एवं अज्ञान नष्ट हो जाते है। विश्वेश्वर के शरीर (काशी) से अभिव्यक्त सुविद्या (ब्रह्मज्ञान) जीवों को महात्मा, पुण्यशील एवं कर्मयोगी बना देती है।।२४-२५।।

तथा- अन्यत्र यः कृतो धर्मः साङ्गः श्रद्धादयायुतः।
अनेककालसंपाद्यः स सिद्धोऽत्र क्षणाद्भवेत्।।२६।।

तथा- अन्यत्र सम्पूर्ण श्रद्धा एवं दया से युक्त दीर्घकाल में अनुष्ठित धर्म काशी में क्षण भर में (स्वल्पतम काल) में ही सिद्ध हो जाता है।।२६।।

तथा- अस्मिन्कलियुगे घोरे लोकाः पापानुवर्तिनः।
भविष्यन्ति महाबुद्धे वर्णाश्रमविवर्जिताः।।२७।।
नान्यत्पश्यामि जन्तूनां मुक्त्वा वाराणसीं पुरीम्।
सर्वपापप्रशमनं प्रायश्चित्तं कलौ युगे।।२८।।
कलौ विश्वेश्वरो देवः कलौ वाराणसी पुरी।
कलौ भागीरथी गङ्गा दानं कलियुगे महत्।।२९।।
अष्टाङ्गादिभिरन्यैश्च तपोयज्ञादिभिः सदा।
साधितैः पाक्षिकी सिद्धिरविमुक्ते निरर्गला।।३०।।

तथा- हे महाबुद्धिशील! इस घोर कलियुग में प्राणी पापी-पापपरायण तथा वर्णाश्रम मर्यादाओं से हीन हो जाएँगे। उनके उद्धार हेतु वाराणसी पुरी के अतिरिक्त अन्य कोई साधन नहीं है। वाराणसी ही सभी पापों का शमन एवं कलियुग का प्रायश्चित्त है। कलियुग में विश्वेश्वर ही एकमात्र देव तथा कलियुग में कैवल्यदायिनी एकमात्र काशी, कलियुग में एकमात्र भागीरथी गंगा तथा कलियुग में एकमात्र दान ही महत्त्वपूर्ण है। अष्टांग योग एवं अन्यान्य तप यज्ञ आदि द्वारा साधित पाक्षिकी सिद्धि अविमुक्त क्षेत्र में स्वतः सिद्ध है।।२७-३०।।

तथा- **मात्रा पित्रा वाऽपि देवैर्मुनीशैः**
कर्तुं शक्यं काशिका यत्करोति।।
नो शक्यं तन्मन्त्रतीर्थादिभिर्वा
ह्यन्यैर्भूपैः किं वराकैश्च लोकैः।।३१।।

तथा- माता-पिता देवों मुनियों द्वारा अशक्य को भी काशी सम्भव कर देती है। तन्त्र मन्त्रतीर्थ अन्यान्य राजाओं एवं बेचारे, सामान्य जीवों द्वारा भी जो सम्भव नहीं उसे काशी सम्भव कर देती है।।३१।।

प्रवेशमात्रेण नरः कृतार्थः स्थित्वा पुनः पापरतो यदा स्यात्।
तदा न तस्यास्ति शरीरमात्रे मृते विमुक्तिर्ननु यातनान्ते।।३२।।

काशी में प्रवेश मात्र से मनुष्य कृतार्थ हो जाता है। काशी में रह कर यदि वह पुनः पाप में रम जाय तो उसके शरीर मात्र में पाप का प्रभाव रहता है। भैरवी यातना के अन्त में उसकी मुक्ति हो जाती है। अर्थात् काशी में रहने वाला यदि पाप करता है तो उस की भी मुक्ति होती है किन्तु मुक्ति के पूर्व उसे भैरवी यातना झेलनी पड़ती है।।३२।।

श्रुता स्मृता गदिता बन्धमोक्षं
करोति यत्काशिका काशरूपा।।
न काशिकाशंकरचिन्तकानां
भवन्ति पापानि मुनीश्वराणाम्।।३३।।

काशी श्रवण, स्मरण तथा उच्चरित होने से बन्धन से मुक्त कर देती है। क्योंकि वह स्वयं ज्योतिरूपा है। काशी एवं काशी पुराधीश्वर शङ्कर का मनसा, वाचा, कर्मणा चिन्तन करने वाले मनुष्य को पाप होता ही नहीं।।३३।।

तथा– **तीर्थार्थी न बहिर्गच्छेन्न देवार्थी कदाचन।**
सर्वतीर्थानि देवाश्च वसन्त्यत्राविमुक्तके।।३४।।

तीर्थ यात्रा की इच्छा तथा देवधर्म की इच्छा वाले व्यक्ति को काशी से बाहर नहीं जाना चाहिए क्योंकि सभी तीर्थ एवं देव अविमुक्त क्षेत्र काशी में ही निवास करते हैं।।३४।।

तथा यमः–

तथा यमराज का काशी के सन्दर्भ में कथन है कि–

केचिन्नाम्ना केऽपि संदर्शनेन
केचिद् गत्वा स्नानमात्रेण केचित्।
केचिद्देवं दक्षिणीकृत्य केचित्
पूजां कृत्वा केऽपि मुक्ता बभूवुः।।३५।।

कुछ लोग नाम से, कुछ लोग सम्यक् दर्शन से, कुछ लोग देवों की प्रदक्षिणा से, कुछ लोग जाकर गंगा स्नान करने से तथा कुछ लोग पूजन करके मुक्त हो गये।।३५।।

ब्रह्मा– **वदन्ति काशीं प्रणमन्ति काशीं**
गच्छन्ति काशीं तव राजधानीम्।।
पूजाजपस्नानपरिक्रमस्तुति-
क्रमैर्नरा यान्ति परं सदाशिवम्।।३६।।

ब्रह्मा के कथनानुसार– कुछ जन काशी का नाम लेते हैं। कुछ लोग प्रणाम करते हैं। कुछ लोग आपकी राजधानी काशी की यात्रा करते है। पूजा, जप, स्नान, परिक्रमा, स्तुति क्रमों से मनुष्य सदाशिव को प्राप्त कर लेते हैं।।३६।।

तथा- यथा लोहं स्पर्शमणौ पतितं कनकं भवेत्।
तथा काश्यां ब्रह्मरूपं प्राप्तुयाच्छिवरूपताम्।।३७।।

तीर्थयात्रार्थिनो ये हि काश्यामागत्य धार्मिकाः।
अकृत्वा पापनिचयं पुनर्यान्ति बहिर्नराः।।३८।।
ते पुनः काशिकां प्राप्य जितेन्द्रियमनोगुणाः।
भवन्ति शुद्धाः शुद्धात्मञ्शुद्धब्रह्मस्वरूपिणः।।३९।।
स्मरणं कीर्तनं काश्या दर्शनं मोक्षबीजकृत्।।

हे पवित्रात्मन्!, जिस प्रकार लोहा स्पर्शमणि पर पतित होते ही स्वर्ण हो जाता है वैसे ही काशी में मनुष्य ब्रह्म-शिव स्वरूप हो जाता है। जो धार्मिक तीर्थयात्री काशी में आकर पाप का संग्रह न करके, पुनः काशी से बाहर जाते हैं, वे पुनः काशी को प्राप्त करके इन्द्रियों मन एवं प्राकृतिक गुणों पर विजय प्राप्त करके शुद्ध होकर निष्कल ब्रह्ममय हो जाते हैं। काशी का स्मरण, कीर्तन तथा काशी का दर्शन मोक्ष के बीज का हेतु हो जाता है।३७-३९।।

काश्यां मृतानां हि शिवंगतानां मुक्ता न वेति प्रविचारिणो ये।
ते गृध्रकाकाजगरा ह्युलूका महामलादाः प्रभवन्ति पापाः।।४०।

जो काशी में मरकर शिवत्व को प्राप्त जीवों के विषय में 'वे मुक्त हुए या नहीं,' ऐसा सोचने वाले हैं वे गृध, कौवा, अजगर, उल्लू एवं महामलभक्षी एवं पापी कहे जाते हैं।।४०।।

ब्रह्मात्मरूपा काशीयं दहेत् पापानि सर्वशः।
दृष्टा स्पृष्टा स्मृता वाऽपि किं पुनर्धर्मवासिनाम्।।४१।।

ब्रह्मात्मस्वरूपिणी यह काशी सर्वतोभावेन सभी प्रकार के पापों को दग्ध कर देती है। दर्शन, स्पर्श या स्मरण मात्र से काशी पापों को नष्ट करती है। धर्मपूर्वक काशीवास करने वालों का तो कहना ही क्या?।।४१।।

तथा- संसारदावदहने पतितानां स्वकर्मभिः।
काश्येव शरणं नान्यन्मुक्तानामपि पार्वति।।४२।।

संसाररूपी दावानल में अपने कर्मों से पतित हुए जीवों के लिये काशी ही एकमात्र शरण है, अन्य कोई नहीं। मुक्त जीवों के लिये भी काशी ही शरण है।।४२।।

तथा- चतुर्विधाश्च ये जीवा ये च देवादयः परे।
ते सर्वे मुक्तिमायान्ति काश्यां स्थावरजङ्गमाः।।४३।।

चार प्रकार के जो भी जीव हैं तथा जो भी देवादि हैं वे सभी स्थावर, जङ्गम, काशी में मोक्ष प्राप्त कर लेते हैं।।४३।।

तथा- पूर्वजन्मकृतैः पापैर्महापातकसंयुतैः।
मुच्यते काशीमरणाज्जनो बहिरुपार्जितैः।।४४।।

पूर्वजन्मों के महापातक संयुक्त विविध पापों एवं काशी से बाहर के भी उपार्जित पापों से भी जीव मुक्त हो जाता है।।४४।।

बहिष्कृतानां पापानामिदमेव महत्तरम्।
प्रायश्चित्तं काशिकायां मरणं वास एव वा।।४५।।

बाहर के पापों का यही श्रेष्ठतम प्रायश्चित है कि वे काशी में मरें अथवा काशीवास करें।।४५।।

तथा- काश्यां देवः शंकरः केशवश्च
काश्यां देवी ह्यन्नपूर्णा रमा च।।
काश्यां ढुण्ढिर्विघ्नहर्ता गणेशः
काश्यां शास्ता कालराजो महेशः।।४६।।

काशी में शङ्कर एवं केशव ही देव हैं। काशी में अन्नपूर्णा एवं रमा ही देवी है। काशी में समस्त विघ्नों का हरण करने वाले ढुण्ढिराज गणेश हैं। काशी में एकमात्र कालराज महेश हैं।।४६।।

काश्यां गङ्गोदग्वहा विष्णुरूपा
काश्यां ब्रह्मा वेदघोषैरुपेतः।।
काश्यां दुर्गा दुःखदारिद्र्यहन्त्री
काश्यां सूर्यो व्याधिबाधानिहन्ता।।४७।।

काशी में उत्तरवाहिनी गंगा विष्णुस्वरूपिणी है। काशी में ब्रह्मा वेदघोष रूप में विद्यमान है। काशी में दुखदारिद्र्य हरण करने वाली दुर्गा विद्यमान है और व्याधि बाधाओं के निहन्ता भगवान् सूर्य हैं।।४७।।

तथा- जीवतां यत्सुखं काश्यामविक्षिप्तेन्द्रियात्मनाम्।
न तत्सत्येन कैलासे न वैकुण्ठे कथंचन।।४८।।

विक्षेप रहित इन्द्रियों वाले जीवों को जो सुख काशी में प्राप्त होता है वह सुख तो सत्यलोक, कैलास या वैकुण्ठ में भी किसी प्रकार प्राप्त नहीं है।।४८।।

तथा- या दृष्टा पापसंघौघान् स्मृता जन्मशतस्य च।
स्पृष्टा शतसहस्त्रस्य नाशयत्येव काशिका।।४९।।

जो दर्शनमात्र से पाप समूहों को, स्मरण करने पर सौ जन्मों के पापों से तथा स्पर्श होने पर हजारों जन्मों के पापों का काशिका नष्ट कर देती है।।४९

मात्रा सह समानत्वं न काश्यर्हति कुत्रचित्।
गर्भवासप्रदा माता काशी गर्भविनाशिनी।।५०।।

काशी की समता माता से कहीं भी नहीं की जा सकती। क्योंकि माता तो गर्भवास (बन्धन) प्रदान करती है किन्तु काशी तो गर्भवास (पुनर्जन्म) को ही समाप्त कर देती है।।५०।।

तथा-यैर्दृष्टा यैः श्रुता काशी यैः स्मृता कीर्तिता तथा।
त एव वन्द्याः पूज्याश्च कृतार्था मुक्तिभागिनः।।५१।।

जिन्होंने काशी का दर्शन किया, जिन्होंने काशी का नाम श्रवण किया, तथा काशी की महिमा का संकीर्त्तन भी कर लिया वे ही वन्दनीय, पूजनीय, कृतार्थ एवं मोक्ष के पात्र हैं।।५१।।

महाप्रलयेऽपि काशी न नश्यतीति सनत्कुमारसंहितायामुक्तं शिवेन भवानीं प्रति-

महाप्रलय में भी काशी का लोप नहीं होता, ऐसा सनत्कुमारसंहिता में भगवान् शङ्कर ने भगवती पार्वती से कहा है-

गते परार्धद्वितये विलीने जगत्यशेषे मयि देवि सर्वे।
रक्षन्ति सम्यग्विविधायुधौधैर्वाराणसीं काशितसूक्ष्मसिद्धिम्।।५२।।
सर्वे प्रमथगणाः।।

द्वितीय परार्द्ध के अन्त में चराचर जगत् के मुझ में विलीन हो जाने पर सभी प्रमथ सम्यक् प्रकार से विविध शस्त्रास्त्रों द्वारा सूक्ष्मातिसूक्ष्म सिद्धियों

को प्रकाशित करने वाली वाराणसी की रक्षा करते हैं। 'सर्वें' शब्द प्रमथगणो का बोधक है।।५२।।

ननु- दैनंदिनेऽथ प्रलये त्रिशूल-
कोटौ समुत्क्षिप्य पुरीं हरः स्वाम्।
बिभर्ति संवर्तमहास्थिभूषण-
स्ततो हि काशी कलिकालवर्जिता।।५३।।

यहा उपस्थित शङ्का का समाधान करते हैं-

प्रश्न हो सकता है कि-

दैनन्दिन प्रलय में भगवान् शङ्कर स्वयं त्रिशूल के अग्रभाग से उठाकर अपनी राजधानी काशीपुरी की रक्षा करते हैं। वे संवर्तमहास्थि की माला (मुण्डमाला) धारण करते हैं। अतः काशी कलि एवं काल से वर्जित है।।५३।।

... इत्यादिवचनैः 'कामारिशूलाग्रधृता लयेऽपि' इत्यादिवचनैश्च दैनंदिनप्रलये शूलाग्रे स्थिता काशी न नश्यतु महाप्रलये तु सर्वस्य प्रकृतिकार्यस्य नाशात्कथं काशी तिष्ठतीति वक्तव्यम्। उच्यते- प्राकृतस्य कार्यस्य ब्रह्माण्डान्तर्गतस्य च सर्वस्य भवतु नाम लयः काश्यास्तु 'शुद्धसत्त्वात्मकं ज्ञात्वा स्तुतं स्तुतिशतैः पृथक्' इत्यादिब्रह्मवैवर्तादिवचनाच्छुद्धचैत-न्यात्मिकायाः-

अविमुक्तमिदं क्षेत्रमपि ब्रह्माण्डमध्यगम्।
ब्रह्माण्डमध्ये न भवेत्पञ्चक्रोशप्रमाणतः।।५४।।

इत्यादि वचनों तथा 'कामारि शूलाग्रधृतालयेऽपि' इत्यादि वचनों के आधार पर शिवशूलाग्रस्था काशी दैनन्दिनप्रलय में भले ही न नष्ट होती हो, किन्तु महाप्रलय में तो प्रकृति के समस्त कार्यों का नाश हो जाने से काशी कैसे सुरक्षित रहती है।

ऐसी शङ्का होने पर उत्तर में कहते हैं कि ब्रह्माण्डान्तर्गत समस्त प्राकृत कार्यों का लय होता है यह सत्य है किन्तु काशी तो शुद्ध सत्त्वात्मक है। "शुद्धसत्त्वात्मकं ज्ञात्वा स्तुतं स्तुतिशतैः पृथक्" इत्यादि ब्रह्मवैवर्त्त आदि

पुराणवचनों से काशी शुद्धचैतन्यस्वरूपा होने के कारण श्रेष्ठ है तथा काशीखण्ड में कहां भी है कि-।।५४।।

अविमुक्तमिदं क्षेत्रमपि ब्रह्माण्डमध्यगम्।
ब्रह्माण्डमध्ये न भवेत् पञ्चक्रोशप्रमाणतः।।५५।।

इत्यादिकाशीखण्डादिवचनाच्च ब्रह्माण्डबहिर्भूतायाः कथं लयः स्यात्। इदं च स्वरूपनिरूपणे स्फुटं भविष्यति। काशीखण्डे-

काशीस्थैः पतितैस्तुल्या न वयं स्वर्गिणः क्वचित्।
काश्यां पाताद्भयं नास्ति स्वर्गे पाताद्भयं महत्।।५६।।
वरं काशीपुरीवासो मासोपवसनादिभिः।
विचित्रच्छत्रसंछायं राज्यं नान्यत्र नीरिपु।।५७।।
शशकैर्मशकैः काश्यां यत्पदं हेलयाऽऽप्यते।
तत्पदं नाऽऽप्यतेऽन्यत्र योगयुक्त्याऽपि योगिभिः।।५८।।
वरं वाराणसीरङ्को निःशङ्को यो यमादपि।
न वयं त्रिदशा येषां गिरितोऽपीदृशी दशा।।५९।।

इत्यादि वचनों से सिद्ध है कि काशी ब्रह्माण्ड से बहिर्भूत है। अतः उसका महाप्रलय में कैसे लय हो सकता है? यह तथ्य काशी के 'स्वरूपनिरूपण' में स्पष्ट होगा। काशी खण्ड में-

काशी में विद्यमान पतितों की समता हम देवलोकवासी किसी भी प्रकार नहीं कर सकते हैं। क्योंकि स्वर्ग में तो पतन का भय है। 'क्षीणे पुण्ये मर्त्यलोकं विशन्ति। किन्तु काशी में पतन से भय नहीं है। काशी पुरी में मास भर भी वास श्रेष्ठ है भले ही उपवास करना पड़े। किन्तु शत्रुहीन, छत्रचामरोपेत काशी के बाहर का राज्य भी तुच्छ है। खरगोश, मच्छर भी जिस पद को काशीवास के फलस्वरूप अनायास ही प्राप्त कर लेते हैं वह पद अन्यत्र योगी भी योग साधना द्वारा प्राप्त नहीं कर सकते। वाराणसी का रंक भी श्रेष्ठ है जो यम के भय से निःशङ्क है। हम देवगणों की भी उच्चस्थिति होने पर भी ऐसी दशा नहीं है। पतन का भय जो है।।५६-५८।।

तथा– धर्मार्थकाममोक्षाख्यं पुरुषार्थचतुष्टयम्।
अखण्डं हि यथा काश्यां न तथाऽन्यत्र कुत्रचित्।।५९।।

तथा– धर्म, अर्थ, काम एवं मोक्ष नामक पुरुषार्थचतुष्टय भी निर्विघ्न रूप से जैसे काशी में उपलब्ध है वैसा अन्यत्र दुर्लभ ही है।।५९।।

तथा–प्रयागादपि तीर्थाग्र्यादविमुक्तं विशिष्यते।
यथाऽविमुक्ते निर्वाणं न तथा क्वाप्यंशयम्।।६०।।
अन्यानि मुक्तिक्षेत्राणि काशीप्राप्तिकराणि हि।
काशीं प्राप्य विमुच्येत नान्यथा तीर्थकोटिभिः।।६१।।

प्रयागतीर्थराज है। किन्तु अविमुक्त (काशी) उससे भी विशिष्ट है। अविमुक्त–काशी में मोक्ष सहज है वैसा अन्यत्र असन्दिग्ध नहीं है। अन्यान्य मुक्तिक्षेत्र काशी प्राप्ति के कारण हैं किन्तु काशी प्राप्त होने पर जीव मुक्त हो ही जाता है। अन्यान्य करोड़ों तीर्थों में वैसा नहीं है।६०–६१।।

तथा–पुरा यमस्तपस्तप्त्वा बहुकालं सुदुष्करम्।
त्रैलोक्याधिकृतिं प्राप्तस्त्यक्त्वा वाराणसीं पुरीम्।।६२।।

इत्यादि। काश्यां यात्रायां धर्मानुष्ठाने वा कालदोषो नास्तीत्युक्तं तत्रैव–

इत्यादि। अर्थात् पहले यम ने दीर्घकालतक अत्यन्त कठोर तप करके त्रैलोक्य पर अधिकार प्राप्त कर लिया। किन्तु वाराणसी पुरी को छोड़कर, क्योंकि काशी तो त्रैलाक्य से पृथक् है। काशी की यात्रा में, धर्मानुष्ठान में कालदोष नहीं होता, ऐसा भी वहीं प्रतिपादित है–।।६२।।

सदा कृतयुगं चास्तु सदाचास्तूत्तरायणम्।
सदा महोदयश्चास्तु काश्यां निवसतां सताम्।।६३।।

काशी में सदा कृतयुग है। काशी में सदा ही उत्तरायण सूर्य हैं। काशी में वास करने वाले सत्पुरुषों का सदा सर्वदा महान् अभ्युदय ही है। मरण भी मंगल हैं।।६३।।

तथा– सदा कृतयुगं चात्र महापर्व सदाऽत्र वै।
न ग्रहास्तोदयकृतो दोषो विश्वेश्वराश्रमे।।६४।।

सदा सौम्यायनं तत्र सदा तत्र महोदयः।
सदैव मङ्गलं तत्र यत्र विश्वेश्वरस्थितिः।।६५।।
यथा भूमितले विप्र पुर्यः सन्ति सहस्त्रशः।
तथा काशी न मन्तव्या काऽपि लोकोत्तरा त्वियम्।।६६।।
मया सृष्टानि विप्रेन्द्र भुवनानि चतुर्दश।
अस्याः पुर्या विनिर्माता स्वयं विश्वेश्वरः प्रभुः।।६७।।

और भी वही कहा है-

विश्वेश्वराश्रम काशी में सर्वदा उत्तरायण ही रहता है। वहाँ सदा ही महोत्सव रहता है। यहाँ ग्रहों के अस्त एवं उदय का दोष नहीं रहता। सदा सर्वदा मंगल ही रहता है। क्योंकि यहाँ सदा सर्वदा विश्वनाथ विद्यमान रहते हैं।

महर्षियों!! जिस प्रकार भूमण्डल में हजारों पुरियाँ हैं काशी वैसी नहीं है। यह तो कोई लोकोत्तर पुरी ही है। मैंने (ब्रह्मा ने) चौदह भुवनों का निर्माण किया है। किन्तु इस काशीपुरी के निर्माता स्वयं देवाधिदेव विश्वनाथ है। वे ही इस पुरी के प्रभु अर्थात् स्वामी हैं। हे सुव्रत!! विना तप एवं जप आदि के, विना [१]अष्टांग योग के, इस काशी में एक ही जन्म में काशीवास से निःश्रेयस की प्राप्ति हो जाती है। कूर्म पुराण के अनुसार शङ्कर जी का कथन है कि मेरी अविमुक्त पुरी काशी सभी तीर्थों में उत्तम, महिमामयी, सभी ज्ञानों में श्रेष्ठ ज्ञानस्वरूपा (ज्योतिस्वरूप) है।।६४-६७।।

तथा- **विना तपोजपाद्यैश्च विना योगेन सुव्रत।**
निःश्रेयो लभ्यते काश्यामिहैकेनैव जन्मना।।६८।।

कौर्मे- **उत्तमं सर्वतीर्थानां स्थानानामुत्तमं महत्।**
ज्ञानानामुत्तमं ज्ञानमविमुक्तं पुरं मम।।६९।।

तथा-मेरी यह प्रियतमा पुरी अन्तरिक्ष में है। उसका दर्शन योगशक्ति रहित मानव नहीं कर सकते। योगयुक्त चेतनासम्पन्न व्यक्ति ही काशी के

---

१. यम-नियम-आसन-प्राणायाम-प्रत्याहार-धारण-ध्यान-समाधि।

वास्तविक स्वरूप का साक्षात्कार कर सकते हैं। अर्थात् मेरी काशी के वास्तविक शक्ति का साक्षात्कार स्थूलचक्षु द्वारा कथमपि सम्भव नहीं है। ज्ञान दृष्टि से ही सम्भव है। क्योंकि यह दिव्यज्योतिस्वरूप है।।६८-६९।।

तथा- भूर्लोके नैव संलग्नमन्तरिक्षे ममाऽऽलयम्।

अयुक्तास्तं न पश्यन्ति युक्ताः पश्यन्ति चेतसा।।७०।।

तथा- नानावर्णा विवर्णाश्च चण्डालाद्या जुगुप्सिताः।

किल्बिषैः पूर्णदेहा ये विशिष्टैः पातकैस्तथा।।७१।।

भेषजं परमं तेषामविमुक्तं विदुर्बुधाः।

तथा जो प्राणी अनेक वर्णों वाले, वर्ण वाह्य, घृणित चाण्डालादि, पापयुक्त कुत्सित देहों वाले, विशिष्टपातकी जीव हैं, उनकी परमौषधि यह 'काशी' ही है। ऐसा बुद्धिमानों का कथन है।।७०-७१।।

तथा शतशस्तीर्थान्यनुक्रम्य-

सर्वेषामपि तीर्थानामेतेषां परमा पुरी।

नाम्ना वाराणसी दिव्या कोटिकोट्ययुताधिका।।७२।।

तथा सैकड़ों तीर्थों का अतिक्रमण करती हुई, सभी तीर्थों में यह पुरी श्रेष्ठपुरी है। 'वाराणसी' नाम से करोड़ो-करोड़ों गुनी श्रेष्ठ एवं दिव्यतमा है।।७२।।

लैङ्गे- पिङ्गला नाम या नाडी आग्नेयी सा प्रकीर्तिता।

शुष्का सरिच्च या ज्ञेया लोलार्को यत्र तिष्ठति।।७३।।

इडानाम्नी च या नाडी सा सौम्या संप्रकीर्तिता।

वरणा नाम सा ज्ञेया केशवो यत्र संस्थितः।।७४।।

आभ्यां मध्ये तु या नाडी सुषुम्ना च प्रकीर्तिता।

मत्स्योदरी च सा ज्ञेया विषुवत्तत्प्रकीर्तिता।।७५।।

लिङ्ग महापुराण के अनुसार-

पिंगला नाम की नाड़ी अग्नि तत्त्वमयी है। वह शुष्क नदी है वहाँ लोलार्क प्रतिष्ठित हैं। इडा नाम की जो नाडी है वह सौम्य (चन्द्रनाड़ी) है। उसी का

नाम वरणा है। वहाँ श्री 'केशव' स्थित हैं। इन दोनों (सूर्य नाड़ी, चन्द्रनाड़ी = इडा पिंगला) के मध्य में स्थित जो नाड़ी है उसका नामा सुषुम्ना है। उसका नाम 'मत्स्योदरी' है। वह 'विषुवत्' नाम से विख्यात है।।७३-७५।।

काशीखण्डे-दक्षिणोत्तरदिग्भागे कृत्वाऽसिं वरणां सुराः।
क्षेत्रस्य मोक्षनिःक्षेपरक्षां निर्वृतिमाययुः।।७६।।
क्षेत्रस्य पश्चाद्दिग्भागे तं देहलिविनायकम्।
स्वयं व्यापारयामास रक्षार्थं शशिशेखरः।।७७।।
अनुज्ञातप्रवेशानां विश्वेशेन कृपावता।
ते प्रवेशं प्रयच्छन्ति नान्येषां हि कदाचन।।७८।।

काशी खण्ड के अनुसार-

देवगण दक्षिण एवं उत्तर दिशाओं के भागों में असी और वरणा (वरुणा) को मानकर इस क्षेत्र को मोक्षरूपी निक्षेप (निधि) की रक्षार्थ परिधि विचार कर अत्यन्त निश्चिन्त हो गये। क्षेत्र के पश्चिम दिग्भाग में स्वयं देहली विनायक को शशिशेखर विश्वनाथ ने ही रक्षार्थ प्रतिष्ठापित कर दिया। परमकारुणिक विश्वनाथ की अनुज्ञा से काशी में (विनायक) काशी में प्रवेश देते हैं। अन्यों का तो कदापि प्रवेश ही सम्भव नहीं है।।७६-७८।।

तीर्थान्तरसमताबुद्धिश्च काश्यां न कार्या।
तदुक्तं काशी-खण्डे-

किसी भी दूसरे तीर्थ से काशी की समता की भावना नहीं करनी चाहिए। यह भी काशी खण्ड में प्रतिपादित है-

रागादिदोषपरिपूरमनोहृषीकाः
काशीपुरीमतुलदिव्यमहाप्रभावाम्।।
ये कल्पयन्त्यपरतीर्थसमां समन्ता-
त्ते पापिनो न सह तैः परिभाषणीयम्।।७९।।

राग-द्वेष आदि दोषों से परिभावित मन तथा इन्द्रियों वाले जो मानव अचिन्त्य अतुलनीय परम दिव्य महाप्रभाववाली काशी की भूमण्डल के अन्यान्य तीर्थों के साथ समता की कल्पना करने की चेष्टा भी करते हैं वे

पापी हैं। उनके साथ सम्भाषण भी नहीं करना चाहिए। वही पर यह भी कहा गया है कि-।।७९।।

काशीखण्डे-गृह्णीयुः पापकर्माणि काशीमृतविनिन्दकाः।
सुकृतानि स्तुतिकृतो मुच्यन्तेऽत्रेति जन्तवः।।८०।।

तथा- बहुजन्मशताभ्यासाद्योगी मुच्येत वा न वा।
मृतमात्रोऽपि मुच्येत काश्यामेकेन जन्मना।।८१।।

काशी में मरने वालों की निन्दा करने वालों को उसका पाप प्राप्त होता है तथा काशी में मरने वालों की स्तुति करने वालों को पुण्य का लाभ होता है। काशी में मृत्यु से कीटादि प्राणी भी मुक्त हो जाते हैं।।८०-८१।।

तथा- पुण्यवानितरो वाऽपि मम क्षेत्रस्य सेवया।
मुक्तो भवति देवेशि नात्र कार्या विचारणा।।८२।।

अनेकानेक, सैकड़ों जन्मों तक योगाभ्यास करने वाले की मुक्ति होगी या नहीं, किन्तु एक ही जन्म में मुक्ति, काशी में मृत्यु मात्र से अवश्य हो जाती है। शङ्कर का कथन है- हे पार्वती!! पुण्यात्मा या पापात्मा मेरे क्षेत्र (काशी) की सेवा (निवास) से अवश्य ही मुक्त हो जाता है। इस विषय में बहुत सोच विचार नहीं करना चाहिए।।८२।।

तथा- गङ्गा विश्वेश्वरः काशी जागर्ति त्रितयं यतः।
तत्र नैःश्रेयसी लक्ष्मीर्लभ्यते चित्रमत्र किम्? इत्यादि।।८३।।

और भी गङ्गा, विश्वेश्वर और काशी ये तीनों जागृत रहते हैं। अतः वहां मोक्ष-लक्ष्मी प्राप्त होती हैं तो उसमें आश्चर्य ही क्या है?।।८३।।

तथा-विश्वेशसंशीलनमेव योगस्तपश्च विश्वेशपुरीनिवासः।
व्रतानि दानं नियमा यमाश्च स्नानं द्युनद्यां यदुदग्वहायाम्।।८४।।

तथा, विश्वेश्वर का चिन्तन ही योग है, विश्वेशपुरी काशी निवास ही तप है, उत्तरवाहिनी स्वर्ण नदी गंगा में स्नान ही व्रत दान नियम और यम है।।८४।।

तथा- चरणौ चरितुं वित्तस्तावेव कृतिनामिह।
चरणौ विचरेतां यौ विश्वभर्तुः पुरीं भुवि।।८५।।

तावेव श्रवणौ श्रोतुं संविदाते बहुश्रुतौ।
इह श्रुतिमतां पुंसां याभ्यां काशी श्रुता सकृत्।।८६।।
तदेव मनुते सर्वं मनस्त्विह मनस्विनाम्।
येनानुमन्यते चैषा काशी सर्वप्रमाणभूः।।८७।।

तथा सुकृतियों के दोनों पैर तभी सार्थक हैं जब विश्वभर्त्ता शङ्कर की राजधानी काशी में भूमि पर विचरण करें। वे ही कान बहुश्रुत हैं जो विद्वानों के द्वारा एक बार भी 'काशी' नाम सुन लें। मनस्वियों का वही मन सार्थक है जो सभी प्रमाणों की भूमि काशी का अनुमोदन करती है।।८५-८७।।

तथा- मरणं मङ्गलं यत्र विभूतिर्यत्र भूषणम्।
कौपीनं यत्र कौशेयं सा काशी क्वोपमीयते।।८८।।

तथा, जहाँ मृत्यु भी मंगलमयी है, भस्म ही आभूषण है, कौपीन ही जहाँ कौशेय (रेशम) वस्त्र है उस काशी की तुलना किससे की जाय? अर्थात् काशी अतुलनीय है।।८८।।

तथा- काशीरजोऽपियन्मूर्ध्नि पतेदप्य निलाहतम्।
चन्द्रशेखर तन्मूर्ध्ना भवेच्चन्द्रकलाङ्कितः।।८९।।

तथा- काशी का धूलिकण वायुवेग से आहत होकर जिसके मस्तक पर पड़ जाय वह साक्षात् चन्द्रशेखर शिव ही है। क्योंकि वह चन्द्रकला से युक्त हो जाता है।।८९।।

तथा-ब्रह्महत्यां नरः कृत्वा पश्चात्संयतमानसः।
प्राणांस्त्यजति यः काश्यां स मुक्तो नात्र संशयः।।९०।।
स्त्रियः पतिव्रता याश्च मम भक्तिसमाहिताः।
अविमुक्ते मृता विप्रा यान्ति ताः परमां गतिम्।।९१।।

तथा- ब्रह्महत्या करने के पश्चात् मनोनिग्रहपूर्वक काशी में वास करते हुए जो मनुष्य प्राणों का परित्याग करता है वह मुक्त हो जाता है। इसमें संशय नहीं है। शिव का ऋषियों से कथन है कि जो पतिव्रता स्त्रियाँ मेरी भक्ति में मन लगा कर समाहित हो जाती हैं वे अविमुक्त क्षेत्र काशी में शरीर त्याग कर परमगति प्राप्त कर लेती हैं।।९०-९१।।

विप्रा इति संबोधनम्। मात्स्ये–

मत्समः पुरुषो नास्ति योषिन्नास्ति च त्वत्समा।
अविमुक्तसमं क्षेत्रं न भूतं न भविष्यति।।९२।।
अविमुक्ते परो योगो ह्यविमुक्ते परा गतिः।
अविमुक्ते परो मोक्षः क्षेत्रं नैवास्ति तादृशम्।।९३।।

मत्स्य महापुराण में शिव काशी के सम्बन्ध में पार्वती से कहते हैं कि– मेरे समान कोई दूसरा पुरुष नहीं है तथा तुम्हारे समान कोई दूसरी स्त्री नहीं है। अविमुक्त क्षेत्र काशी के समान कोई भी क्षेत्र न हुआ न हो सकता है। अविमुक्त में ही परम योग है, अविमुक्त में ही परागति है। अविमुक्त में ही परममुक्ति है। अविमुक्त जैसा क्षेत्र न तो होगा ही।।९२–९३।।

तथा– **पृथिव्यामीदृशं क्षेत्रं न भूतं न भविष्यति।**
चतुर्मूर्तिः सदा धर्मस्तस्मिन्संनिहितः प्रिये।।९४।।
चतुर्णामपि वर्णानां गतिस्तु परमा स्मृता।

पृथिवी पर ऐसा क्षेत्र न तो हुआ और न तो होगा ही। इस क्षेत्र में चतुर्मूति धर्म सदा सर्वदा विद्यमान रहता है। चारों वर्णों की परमगति काशी ही तो है।।९४।।

तथा– **मद्भक्तास्तत्र तिष्ठन्ति विष्णुभक्तास्तथैव च।।९५।।**
ये भक्ता भास्करे देवे लोकनाथे दिवाकरे।

मेरे भक्त विष्णु के भक्त तथा जो लोकनाथ सूर्य के भक्त हैं, वे सब वहाँ (अविमुक्त) में निवास करते हैं।।९५।।

तथा– **ज्ञेये विहितनिष्ठानां परमाऽऽनन्दमिच्छताम्।।९६।।**
या गतिर्विहिता सद्भिः साऽविमुक्ते मृतस्य तु।

'ज्ञेय' (लक्ष्य) में मनसा वाचा कर्मणा निष्ठावान् परमानन्द की इच्छावालों की जो गति सज्जनों द्वारा विहित हैं वही गति अविमुक्त काशी में देह त्याग मात्र से प्राप्त हो जाती है।।९६।।

तथा– **अविमुक्तगुणा वक्तुं देवदानवमानवैः।।९७।।**
न शक्यन्तेऽप्रमेयत्वात्स्वयं यत्र भवः स्थितः।

अविमुक्त क्षेत्र (काशी) के गुणों का वर्णन हजारों देव दानव मानव नहीं कर सकते। क्योंकि काशी के गुण अप्रमेय हैं। क्योंकि चराचर ब्रह्माण्ड के जनक शंकर (भव) यहाँ स्वयं स्थायी रूप से विद्यमान रहते हैं।।९७।।

तथा-कृत्वा पापसहस्राणि पश्चात्संतापमेत्य वै।।९८।।
योऽविमुक्ते वियुज्येत स याति परमां गतिम्।
उत्तरं दक्षिणं वाऽपि अयनं न विकल्पयेत्।।९९।।
सर्वस्तस्य शुभः कालो ह्यविमुक्ते म्रियेत यः।
न तत्र कालो मीमांस्यः शुभो वा यदि वाऽशुभः।।१००।।

तथा हजारो पापों को करने के अनन्तर पश्चात् सन्ताप (अपराध बोध जन्य) का अनुभव करते हुए जो प्राणी 'अविमुक्त' (काशी) में शरीर त्याग करता है। उसे परमगति प्राप्त हो जाती है।।९८-१००।।

तथा- जपध्यानविहीनानां ज्ञानवर्जितचेतसाम्।
तथा दुःखहतानां च गतिर्वाराणसी नृणाम्।।१०१।।

और भी, अविमुक्तक्षेत्र काशी में उत्तरायण अथवा दक्षिणायन का भेद भाव नहीं करना चाहिए। जो प्राणी अविमुक्त क्षेत्र (काशी) में देहत्याग करता है उसके लिये सभी काल शुभ हैं। काल के शुभ या अशुभ होने का विचार अनावश्यक है।

तथा, जप-ध्यान से रहित एवं ज्ञान हीन तथा अत्यन्त कष्ट से शरीर त्यागने वालों के लिए एक मात्र वाराणसी ही गति है। (गति शब्द मोक्ष परक भी है)।।१०१।।

अग्निपुराणे-वाराणसीं परं तीर्थं गौर्यै प्राह महेश्वरः।
भुक्तिमुक्तिप्रदं पुण्यं वसतां भजतां हरिम्।।१०२।।
गौरिक्षेत्रं न वै मुक्तमविमुक्तं ततः स्मृतम्।
जप्तं दत्तं हुतं तप्तमविमुक्ते किलाक्षयम्।।१०३।।
अश्मना चरणौ हत्वा वसेत्काशीं न हि त्यजेत्।

अग्निपुराण के अनुसार- महेश्वर ने पार्वती से कहा है कि वाराणसी श्रेष्ठ, पवित्रतम तीर्थ है। जो मनुष्य यहाँ वास करते हुए श्री हरि का भजन

करते हैं उन्हें अभ्युदय एवं निःश्रेयस प्रदान करता है। गौरीक्षेत्र मुक्त नहीं है। इसलिए 'अविमुक्त' क्षेत्र मान्य है। अविमुक्त क्षेत्र में जप, दान तथा हवन अक्षय रहता है। पत्त्थरों के प्रहार से पैरों को तोड़ कर भी काशी में वास करना चाहिए। काशी का कभी भी त्याग नहीं करना चाहिये।।१०२-१०३।।

तथा- वरणा च नदी चासी तयोर्मध्ये वाराणसी।
अत्र स्नानं जपो होमो मरणं देवपूजनम्।।१०४।।
श्राद्धं दानं निवासश्च यज्ञः स्याद्भुक्तिमुक्तिदम्।

तथा वरणा और असी दो नदियाँ हैं। उन दोनों के मध्य में वाराणसी है। यहाँ स्नान, जप, होम देव पूजन एवं श्राद्ध, दान, निवास, यज्ञ भोग एवं मोक्ष प्रदान करने वाले हैं। यहाँ भुक्ति मुक्ति प्रद इस कथन द्वारा उपक्रमोपसंहार न्याय से उन का निराकरण किया गया है, जिनका कथन है कि- 'काशी के मुक्ति क्षेत्र होने के कारण काम्य कर्मों में कोई विशेषता नहीं हैं।'।।१०४।।

अत्र भुक्तिमुक्तिप्रदमित्युपक्रमोपसंहाराभ्यां ते निराकृता य आहुः काश्या मुक्तिक्षेत्रत्वात्काम्यकरणेऽत्रातिशयः कश्चिन्नास्तीति। पाद्मे सृष्टिखण्डे-

वरणा चाप्यसिश्चैव द्वे नद्यौ सुरनिर्मिते।
अन्तराले तयोः क्षेत्रं वध्या न विशते क्वचित्।।
वध्या हत्या।
तत्तीर्थं सर्वतीर्थानामुत्तमं परिकीर्तितम्।
त्यजन्ति तत्र ये प्राणान्प्राणिनो नियतात्मनः।।
रुद्रत्वं ते समासाद्य भवेन सह मोदते (?)।
स्कान्दे-ब्रह्मघ्नगोघ्नगुरुतल्पगभिन्नवृत्त-
न्यासापहारिकुहकादिनिषिद्धवृत्तिः।।
संसारभूतदृढपाशविमुक्तदेहो
वाराणसीं मम पुरीं समुपैति लोकः।।१०५।।
नारदीये- तीर्थानामुत्तमं तीर्थं क्षेत्राणां क्षेत्रमुत्तमम्।
वाराणसीति विख्यातं सर्वदेवनिषेवितम्।।१०६।।

पद्ममहापुराण के सृष्टि खण्ड में कहा गया है–

'वरणा और असि ये दो नदियाँ देव निर्मित है। इन दोनों नदियों के अन्तराल क्षेत्र में 'हत्या' का प्रवेश नहीं होता। वह तीर्थ सभी तीर्थों में श्रेष्ठतम है। यहाँ जो प्राणी आत्म संयम पूर्वक रहते हुए शरीर त्याग करते हैं वे रुद्र स्वरूप हो जाते हैं एवं शिव के साथ आनन्द करते हैं। स्कन्द पुराण के अनुसार– ब्रह्म हत्यारे, गोहत्यारे, पूजनीया महिलाओं के साथ भग्नशील, न्यास (धरोहर) हारी, धूर्त्तता आदि निषिद्ध वृत्तियों वाले, संसार की नश्वर वस्तुओं में दृढतापूर्वक आसक्त प्राणी भी काशी में देह त्याग कर मोक्ष प्राप्त कर लेता है।'' 'नारदीय महा पुराण के अनुसार– तीर्थों में उत्तम तीर्थ क्षेत्रों में उत्तमक्षेत्र, सभी देवों द्वारा सेवित वाराणसी विख्यात है।।१०५-१०६।।

पुराणवाक्यों की आधारभूत श्रुतियाँ–

अब काशी के विषय में उद्धृत 'पुराण' वाक्यों की मूलभूत श्रुतियाँ उद्धृत की जाती हैं। इसी प्रसंग में 'जाबालोपनिषद्' में श्रुत है कि–

अथैतेषां पुराणवाक्यानां मूलभूताः श्रुतयोऽप्युच्यन्ते। तत्र जाबालोपनिषदि–'अथैनमत्रिः पप्रच्छ याज्ञवल्क्यं य एषोऽव्यक्तोऽनन्त आत्मा तं कथमहं विजानीयामिति स होवाच याज्ञवल्क्यः सोऽविमुक्त उपास्यो य एषोऽनन्तोऽव्यक्त आत्मा सोऽविमुक्ते प्रतिष्ठित इति सोऽविमुक्तः कस्मिन्प्रतिष्ठित इति वरणायां नास्यां च मध्ये प्रतिष्ठित इति का वै वरणा का च नासीसि सर्वानिन्द्रियकृतान्दोषान्वारयति तेन वरणेति सर्वानिन्द्रियकृतान्पापान्नाशयति तेन नासीति' (जाबालो. ख.२) तथा तत्रैव–अविमुक्तं वै देवानां देवयजनं सर्वेषां भूतानां ब्रह्मसदनमत्र हि जन्तोः प्राणेषूत्क्रममाणेषु रुद्रस्तारकं ब्रह्म व्याचष्टे येनासावमृतीभूत्वा मोक्षीभवति तस्मादविमुक्तमेव निषेवेताविमुक्तं न विमुञ्चे देवमेवैतद्याज्ञवल्क्यः'(जाबालो. ख.१)इति।

रामतापनीयोपनिषद्यपि–

श्रीरामस्य मनुं काश्यां जजाप वृषभध्वजः।
मन्वन्तरसहस्रैस्तु जपहोमार्चनादिभिः।।१०७।।

ततः प्रसन्नो भगवाञ्श्रीरामः प्राह शंकरम्।
वृणीष्व यदभीष्टं तद्दास्यामि परमेश्वर।।१०८।।

स होवाच– मणिकर्ण्यां वा मत्क्षेत्रे गङ्गायां वा तटे पुनः।
म्रियते देहि तज्जन्तोर्मुक्तिं नातो वरान्तरम्।।१०९।।

अथ स होवाच श्रीरामः–

क्षेत्रेऽत्र तव देवेश यत्र कुत्रापि वा मृतः।
कृमिकीटादयोऽप्यत्र मुक्ताः सन्तु नान्यथा।।
अविमुक्ते तव क्षेत्रे सर्वेषां मुक्तिसिद्धये।
अहं संनिहितस्तत्र पाषाणप्रतिमादिषु।।
क्षेत्रेऽस्मिन् योऽर्चयेद्भक्त्या मन्त्रेणानेन मां शिव।
ब्रह्महत्यादिपापेभ्यो मोक्षयिष्यामि मा शुचः।।
त्वत्तो वा ब्रह्मणो वाऽपि ये लभन्ते षडक्षरम्।
जीवन्तो मन्त्रसिद्धाः स्युर्मुक्ता मां प्राप्नुवन्ति ते।।
मुमूर्षोर्दक्षिणे कर्णे यस्य कस्यापि वा स्वयम्।
उपदेक्ष्यसि मन्मन्त्रं स मुक्तो भविता शिव।।

इत्थमनेकपुराणश्रुतिप्रथितपृथुमहिम्नो वाराणस्याः कियान्मादृशैर्महिमा लेखनीय इत्युपरम्यते।

इन्हीं श्रुतियों का उपबृंहण अनेक पुराणों में अनेक ऋषियों ने किया है। इस प्रकार अनेक पुराण एवं वेद से प्रसिद्ध अत्यन्त गरिमापूर्ण वाराणसी की कितनी महिमा है और हमारे जैसे लेखक कहाँ तक वाराणसी की महिमा लिखें। अतः यही लेखनी को विराम देते हैं।

।। इति श्रीमन्नारायणभट्टविरचिते त्रिस्थलीसेतौ सामान्यतः काशीमहिमाऽनुवादः समाप्तः।।

।। अथ काशीमाहात्म्यश्रवणमहिमा ।।

काशीखण्डे-श्रुताश्च सर्वधर्मास्तैर्महापुण्यैकराशिभिः।
श्रुतं यैः स्थिरचेतोभिः काशीमाहात्म्यमुत्तमम्।।१।।

जिन किन्हीं मनुष्यों ने स्थिर चित्त होकर काशी की उत्तम महिमा का श्रवण कर लिया वे महापुण्यों के समूह केन्द्र है तथा ऐसा समझना चाहिये कि उन्होंने साङ्गोपाङ्ग सभी धर्मों का श्रवण कर लिया है। अभिप्राय यह है कि काशी माहात्म्य के प्रेमपूर्वक श्रवण से साङ्गोपाङ्ग वेदविहित धर्मों के श्रवण का फल प्राप्त होता है।।१।।

कौर्मे- **यः पठेदविमुक्तस्य माहात्म्यं शृणुयादपि।**
श्रावयेद्वा द्विजाञ्शान्तान्सोऽपि याति परां गतिम्।।२।।
श्राद्धे वा देवकार्ये वा रात्रावहनि वा द्विजः।
नदीनां चैव तीरेषु देवतायतनेषु च।
जपेदीशं नमस्कृत्य स याति परमां गतिम्।।३।।

कूर्म महापुराण में कहा है कि- जो मनुष्य अविमुक्त (काशी) का माहात्म्य पढ़ता है, सुनता है तथा शान्त द्विजों (मानवों) को सुनाता है उसे परमगति प्राप्त होती है। श्राद्ध, यज्ञादि में, रात्रि में, नदियों के तटों पर, देवालयों में, भगवान् विश्वनाथ के मन्त्र का जप करें, नमस्कार करे वह उत्तम गति प्राप्त कराता हैं। अर्थात् 'काशी माहात्म्य' का श्रवण, शिवमन्त्र का जप एवं नमन शिवत्वप्रद है।।२-३।।

लैङ्गे- **एतद्वः कथितं सर्वं कथासर्वस्वमादरात्।**
यः पठेच्छृणुयाद्वाऽपि क्षेत्रमाहात्म्यमुत्तमम्।।४।।
सर्वक्षेत्रेषु यत्पुण्यं तत्पुण्यं सकलं भवेत्।
श्रावयेद्वा द्विजाञ्शान्तान्कृतशौचाञ्जितेन्द्रियान्।।५।।
स एवं सर्वयज्ञानां फलं प्राप्नोति मानवः।

लिङ्ग महापुराण में कहा है- यह सब कथा का सर्वस्व मैंने आदरपूर्वक आप से कहा। जो इस क्षेत्र (काशी) के माहात्म्य की कथा का श्रवण अथवा वाचन करता है उसके फलस्वरूप अन्य सभी क्षेत्रों का पुण्य सम्पूर्ण हो जाता है। जो इस कथा (काशी महात्म्य) को शान्त, पवित्र जितेन्द्रिय मनुष्यों को सुनाता है वह सभी यज्ञों का फल प्राप्त करता है।।५।।

पाद्मे भृगुः- इत्थं तपोधनाः काश्या माहात्म्यं प्रोक्तवानहम्।

यच्छ्रुत्वाऽपि विलीयन्ते पापानि सुमहान्त्यपि।।६।।

पद्म महापुराण में महर्षि भृगु का कथन है कि- हे तपोधनो! मैं ने इस प्रकार काशी का माहात्म्य कहा। जिसे सुनकर बड़े से बड़े पाप भी नष्ट हो जाते हैं।।६।।

अथ काशीस्वरूपं पद्मपुराणे-

ब्रह्मैवैतन्निर्गुणं निर्विकारं

निरन्तरं क्षेत्ररूपेण नित्यम्।।

तिष्ठत्येव त्र्यम्बकोऽप्यत्र नित्यं

तद्रूपत्वात्संनिहित एव चाऽऽस्ते।।७।।

विभूतिं स्वां दर्शयिष्यन्गिरीशः

क्षेत्राकारं प्राप तीर्थाकृतिं च।।

पद्ममहापुराण में वर्णित काशी का स्वरूप- निर्गुण, निर्विकार, भेदरहित, नित्य, अविनाशी ब्रह्माभिन्न त्र्यम्बक यहाँ सदा सर्वदा विद्यमान रहते हैं। गिरीश भगवान् शङ्कर काशी क्षेत्र में तीर्थ के रूप में विद्यमान है। शङ्कर काशी क्षेत्र में तीर्थरूप से प्रकट हैं।।७।।

सनत्कुमारसंहितायाम्-

यत्तच्छिवानन्दमनन्तमाद्यं

यदावयोर्नित्यमभिन्नरूपम्।।८।।

दृश्यं समस्तोपनिषत्सु भक्तै-

र्जानीहि तेजस्तददोऽविमुक्तम्।।

ज्योतिर्लिङ्गं त्वमेवाऽऽर्ये लिङ्गी चाहं महेश्वरः।
तदेतविमुक्ताख्यं ज्योतिरालोक्यतां प्रिये।।९।।

सनत्कुमार संहिता में भी कहा गया है- प्रिय! श्रुतियों में यत् एवं तत् पदों से श्रूयमाण आद्यन्तशून्य अखण्ड आनन्द, हमदोनों का अभिन्न रूप शिव है, तथा जो भक्तों (मन्त्र द्रष्टाओं) द्वारा सभी उपनिषदों में दर्शनीय है वही तेज प्रत्यक्ष अविमुक्त है, यह जानो। तुम स्वयं ज्योतिलिङ्ग हो। मैं लिङ्गी महेश्वर अर्थात् ईश्वरों का भी ईश्वर हूँ। वही हम दोनों की अभिन्न अखण्ड ज्योति यह अविमुक्तक्षेत्र है। इसका दर्शन करो। अर्थात् अविमुक्त क्षेत्र काशी शिवमित्र शिव का ही प्रत्यक्ष स्वरूप है।।८-९।।

काशीखण्डे-परं ब्रह्म यदाम्नातं निष्प्रपञ्चं निरात्मकम्।
निर्विकल्पं निराकारमव्यक्तं स्थूलसूक्ष्मवत्।।
तदेतत्क्षेत्रमापूर्य स्थितं सर्वगमप्यहो।
शंभोः शक्तिरियं काशी काचित् सर्वैकगोचरा।१०।
शंभुरेव हि जानीयादेतस्याः परमं सुखम्।

काशीखण्ड के अनुसार-श्रुतियों में जो निष्प्रपञ्च निश्चेष्ट (निरात्मक),विकल्प-शून्य नीरूप अव्यक्त स्थूल-सूक्ष्म प्रपञ्च का अधिष्ठान ब्रह्म आम्नात है वही सर्वव्यापक तेज इस क्षेत्र में सर्वतः परिपूर्ण होकर विद्यमान है। यह परम विचित्र है। अहो शब्द आह्लादमय आश्चर्यार्थक है। यह काशी अनन्तानन्त कल्याणों का मूल है। (शं+भू) यह काशी धरा उन्हीं शम्भु की शक्ति है, जो चिदानन्दमयी क्वचित् ही है। यह सर्वतोभावेन अखण्ड पूर्ण एवं इन्द्रियातीत होते हुए भी इन्द्रियगोचर है। अर्थात् शम्भु ही इस काशी के आनन्द को जानते हैं।।१०।।

ब्रह्मवैवर्ते ऋषय ऊचुः-

छत्राकारं तु किं ज्योतिर्जलादूर्ध्वं प्रकाशते।
निमग्नायां धरण्यां तु न निमज्जति तत्कथम्।।११।।

ब्रह्मवैवर्त्त में ऋषियों ने कहा है कि- यह छत्राकार ज्योति क्या है? यह प्रलय कालीन ब्रह्माण्ड के जलमग्न होने पर भी जल से ऊपर जगमगा रही है। धरती के जल में डूब जाने पर भी नहीं डूबती है। यह कैसे?

विष्णुरुवाच-छत्राकारं परं ज्योतिर्दृश्यते गगनेचरम्।
तत्परं परमं ज्योतिः काशीति प्रथितं श्रुतौ।।१२।।
रत्नं सुवर्णे खचितं यथा भवे-
त्तथा पृथिव्यां खचिता हि काशिका।।
न काशिका भूमिमयी कदाचि-
त्ततो न मज्जेन्मम सत्कृतिर्यत्।
जडेषु सर्वेष्वपि मज्जमाने-
ष्वियं चिदानन्दमयी न मज्जति।।१३।।
स्वयं निमग्ना कथमुद्धरेत्परान्
लोके च वेदे च विचार्यमेतत्।

ऋषियों के पूछने पर भगवान् विष्णु ने कहा- यह जो छत्राकार परमज्योति आकाश में गतिशील है। वही परमब्रह्म रूप प्रकाश है। जो 'काशी' नाम से वेदों में प्रसिद्ध है। जैसे रत्न सुवर्ण मण्डित शोभित है वैसे ही यह काशी भूमण्डल में शोभायमान है। यह काशिका भूमिमयी नहीं है। ज्योतिर्मयी होने के कारण जल में नहीं डूबती है। यह काशी हमारी सत् कृति है। सभी जड़ पदार्थ जल में डूब जाते हैं। यह काशी तो चिदानन्दमयी चेतन होने के कारण कभी नहीं डूबती। जल में डूब जाय तो अन्यान्य जीवों का यह उद्धार कैसे कर सकती है? यह लोक एवं वेद दोनों में विचारणीय है।।१२-१३।।

ऋषय ऊचुः-

वासुदेव महादेव ब्रह्मरूप नमोऽस्तु ते।
तत्स्वरूपा कथं काशी कथं वा खचिता त्वया।।१४।।
भूमौ भुवननाथेश किमर्थं वा पृथक् कृता।

ऋषियों ने कहा- हे 'वासुदेव महादेव! ब्रह्मरूप आप को नमस्कार है। यह काशी वैसे ब्रह्ममयी है? आपने इसे भूतल पर किस प्रकार सँवारा यह ज्योतिर्मयी काशी भूमि पर होते हुए भी कैसे और क्यों भूमि से पृथक् कर दी गयी? हे भुवन नाथ के स्वामी! इसमें क्या प्रयोजन है?।।१४।।

विष्णुरुवाच–

सदाशिवो महादेवो लिङ्गरूपधरः प्रभुः।
मया स्मृतो लोकमुक्त्यै प्रदेशपरिमाणतः।।१५।।

तब भगवान् विष्णु ने उत्तर में कहा– सदाशिव महादेव लिङ्ग रूपधारी है। वे सबके स्वामी हैं। वे वितस्ति परिमाण के हैं। लोक के जीवों की मुक्ति के लिए मैंने उनका स्मरण किया है। शिवलिङ्ग वितस्ति परिमाण वाला है। (त्रिस्थलीसेतुकार ने पुराणोक्त सम्पूर्ण प्रसंग लिखा है। ब्रह्मवैवर्त्तपुराण में ऋषि सम्वाद है। ऊपर उसका भावार्थ अनूदित है। वहाँ का सम्पूर्ण प्रसंग निम्नलिखित है)–

मुमुक्षवो मोक्षसाधनानुष्ठानेऽपीन्द्रियवैषम्यान्मोक्ष-विघ्नैर्मोक्षाप्राप्तौ मां प्रार्थितवन्तस्ततो मया लोकानुग्रहकाम्यया प्रादेशपरिमाणः सदाशिवः स्मृत इति प्रघट्टकार्थः।

ब्रह्मवैवर्त्त के विष्णु–ऋषि सम्वाद का अर्थ–तात्पर्य सुव्यक्त करते हुए 'त्रिस्थलीसेतुकार महामहोपाध्याय श्रीनारायण भट्ट कहते हैं कि मुमुक्षु पुरुषों में मोक्ष साधनानुष्ठान में भी इन्द्रियों की विषमता से उत्पन्न विघ्नों के कारण मोक्षप्राप्ति न होने पर मेरी प्रार्थना की। तब मैंने लोककल्याण हेतु प्रादेशपरिमाण वाले सदाशिव का स्मरण किया। यह प्रघट्टकार्थ है। आगे भी भगवान् विष्णु का कथन है–

लिङ्गरूपधरः शंभुर्हृदयाद्बहिरागतः।
वृद्धिमासाद्य महतीं पञ्चक्रोशात्मकोऽभवत्।।१६।।
आ पातालादा वैकुण्ठं व्याप्य चोर्ध्वमवस्थितः।
ममेष्टदेवो दयितः परमात्मा पिनाकधृक्।।१७।।
कैलासादभ्यगाद्देव्या भवान्या सहितः प्रभुः।
दृष्ट्वा लिङ्गं परानन्दं ज्योतिरूपं सनिर्मलम्।।१८।।
दृष्ट्वा मामुक्तवान् रुद्रस्त्वया सम्यगिदं कृतम्।
ज्योतिर्लिङ्गं प्रकटितं सर्वप्राणिविमुक्तिदम्।।१९।।

रुद्रस्य वचनं श्रुत्वा मया तत्स्थाणुरूपधृक्।
शुद्धसत्त्वात्मकं ज्ञात्वा स्तुतं स्तुतिशतैः पृथक्।।२०।।

वितस्तिप्रमित रूपधारी शम्भु मेरे हृदय से बाहर आये और महती वृद्धि को प्राप्त कर के पाँच क्रोशात्मक हो गये। पाताल में वैकुण्ठ पर्यन्त व्याप्त होकर ऊर्ध्व में अवस्थित हो गये। मेरे इष्टदेव मेरे आराध्य, पिनाकधारी, प्रियतम परमात्मा मेरे स्मरण के फलस्वरूप कैलास से, पराम्बा जगदम्बा भवानी के सहित प्रगट हो गये।

उन्होंने परानन्द स्वरूप परम निर्मल ज्योतिर्लिंग को देखकर मुझसे कहा कि तुम ने उचित ही किया है। तुम्हारे द्वारा आविर्भावित यह ज्योतिर्लिङ्ग सभी जीवों को मोक्ष प्रदान करने में समर्थ होगा–

तब मैंने रुद्र के वचन को सुनकर जान लिया कि स्थाणुरूपधारी साम्बसदाशिव विशुद्ध सत्त्व स्वरूप हैं। मैंने उनकी 'शतरुद्रीय' से स्तुति की। (स्तुतिशतैः शब्द से 'शतरुद्रीय' ग्राह्य है जो वेदों में है तथा महाभारत के द्रोण पर्व के अन्त में स्वयं कृष्ण द्वैपायन में उसका उपबृंहण किया है)।।१६–२०।।

लिङ्गाकारं क्वचिद् भाति दण्डाकारं क्वचित् पुनः।
छत्राकारं क्वचिद्भाति पिण्डाकारं त्रिकोणकम्।।२१।।

यह भक्तभावपरिभाषित शुद्ध सत्वात्मक रुद्र कभी लिङ्गाकार, कभी दण्डाकार, कभी छत्राकार, कभी पिण्डाकार एवं त्रिकोणाकार भी दिखलायी पड़ता है।।२१।।

कहा भी है–

दृश्यते मुनिसंघैस्तद्यथामति तथैव तत्।
जडत्वात्पृथिवी भग्ना सप्राणिनगकानना।।२२।।
अजडत्वादिदं लिङ्गं छत्राकारमवस्थितम्।
चैतन्यजडयोरैक्यं कथमेकस्थयोरपि।।२३।।
भवेदिति महाभागा जानन्ति कथयन्ति च।
तस्मात् काशी ब्रह्मरूपाऽजडा पृथ्व्या न संगता।।२४।।

मुनि गण जिस भावना से दर्शन चाहते हैं। वैसा ही उसका रूप हो जाता है।

इस वचनों से सुव्यक्त है कि- **ब्रह्म निराकार है तथा भक्तों की भावना ही उसे आकार देती है।**

काशी ब्रह्मरूप अजड़ है अतः पृथ्वी से सम्बद्ध नहीं है। पुनः भगवान् विष्णु कहते हैं। लोक के जन कहते हैं कि काशी केशव द्वारा निर्मित है किन्तु मैंने तो 'काशी' के परम दिव्य शुद्ध सत्त्वात्मक स्वरूप का दर्शन मात्र किया है। निर्माण तो जड़ का हो सकता है। परमतत्त्व स्वरूपिणी शिवशक्त्यैक्यरूपिणी काशिका तो परब्रह्मात्मिका है। अतः केशव द्वारा 'काशी' के निर्माण की प्रसिद्धि औपचारिकी मात्र है। भगवती काशिका का मुझे सदाशिव की अशेषविशेष कृपा के फलस्वरूप दर्शन ही हुआ है। जब मैं 'श्वेतवाराह' रूप में ब्रह्मा के नासाविवर से अवतरित होकर रसातल में अन्तर्निलीन पृथ्वी का उद्धार करूँगा तब काशी पुनः भूतल को कृतार्थ करेगी-।।२२-२४।।

दृष्टं तत्काशिकारूपं निर्मितं न मया परम्।
वदन्ति लोकाः सततं काशी केशवनिर्मिता।।२५।।
निर्माणं तु जडस्यात्र क्रियते नो परात्मनः।
उद्धरिष्यामि च महीं वाराहं रूपमास्थितः।।२६।।
तदा पुनः पृथिव्यां हि काशी स्थास्यति मत्प्रिया।
पञ्चक्रोश्या परिमिता तनुरेषा पुरी मम।
अविच्छिन्नप्रमाणर्धिर्भक्तनिर्वाणकारणम्।।२७।।

पाँच कोश की चतुष्पथीना परिक्रमा से काशी पच्चीस कोश की हो जाती है। ब्रह्मवैवर्त्त में कहा है-

शिवशक्त्यात्मकं लिङ्गं श्रुतिभिः परिपठ्यते।
योनिः शक्तिः शिवो लिङ्गं प्रकृतेः पुरुषस्य च।।२८।।
स्वरूपं प्रथितं वेदे पुराणादिषु पार्वति।
सदाशिवस्य या काचिच्छक्तिश्चैतन्यरूपिणी।।२९।।
सैव काशीति संप्रोक्ता लिङ्गरूपाऽनपायिनी।
केचित्काशीं वदन्त्येतामविमुक्तं तथाऽपरे।।३०।।

पञ्चक्रोशात्मकं लिङ्गं रुद्रावासमथापरे।
ब्रह्मवासं विष्णुवासं वाराणसीमथापरे।।३१।।
इत्यादि नामभिरुक्तमेकमेव सनातनम्।
लिङ्ग सादाशिवं शुद्धं ब्रह्माख्यं पूर्णचिद्घनम्।।३२।।
तथा–यल्लिङ्गं दृष्टवन्तौ तु नारायणपितामहौ।
तदेव लोके वेदे च काशीति परिगीयते।।३३।।

वेदों में शिवशक्त्यात्मक 'लिङ्ग' पठित है। योनि शक्ति है तथा लिङ्ग शिव है। यही प्रकृति एवं पुरुष का स्वरूप है। यह वेद एवं पुराणों में अत्यन्त प्रसिद्ध है। सदाशिव की जो 'का' रूपा चिच्छक्ति है वह अखण्डचैतन्यात्मिका है। वहीं 'काशी' है। वह अनपायिनी अविनाशिनी लिङ्ग स्वरूपिणी है। इसे कुछ जन काशी अन्य भक्त अविमुक्त और लोग पञ्चक्रोशात्मक लिङ्ग तथा कुछ लोग 'रुद्रावास', अन्य जन ब्रह्मवास, विष्णुवास तथा कतिपय लोग वाराणसी नाम से जानते हैं। इस प्रकार अनेक नामों से एक ही सनातन सदाशिव का लिङ्ग पूर्ण चिदानन्द शुद्ध ब्रह्म है। नारायण एवं पितामह ब्रह्मा में जिस अनतिशय बृहत् लिङ्ग का दर्शन किया था वही लोक एवं वेद में 'काशी' नाम से प्रसिद्ध है।।३१–३३।।

'काशीखण्ड' में कहा है–

क्षेत्रमेतत्त्रिशूलाग्रे शूलिनस्तिष्ठति द्विज!।
अन्तरिक्षे न भूमिष्ठं नेक्षन्ते मूढबुद्धयः।।३४।।
तथा– अविमुक्तं महाक्षेत्रं पञ्चक्रोशीपरीमितम्।
ज्योतिर्लिङ्गं तदेकं हि ज्ञेयं विश्वेश्वराभिधम्।।३५।।

द्विजों! यह अविमुक्तक्षेत्र भगवान् विश्वनाथ के त्रिशूल के अग्रभाग पर अवस्थित है। अतः अन्तरिक्ष में है। यह भूतल पर नहीं है। इस रहस्य को अज्ञानी नहीं देख या समझ सकते हैं। यह अविमुक्त महाक्षेत्र (महाश्मशान) है। इसका परिमाण पञ्चक्रोश का है। चतुर्दिक् परिक्रमा से यह पचीस क्रोश की है। यही काशी एक, अद्वितीय अखण्ड विश्वेश्वर लिङ्ग है। यह ज्योतिर्मयी है।।३४–३५।।

ब्रह्मवैवर्ते-

कदाचिल्लिङ्गरूपेण शिवेन परमात्मना।
शक्तिः पृथक्कृता शान्ता काशीति प्रथितिं गता।।३६।।
अधिष्ठात्री देवता त्वमिति क्षेत्रस्वरूपिणी।
भव त्वं सर्वभक्तानां महामोक्षप्रदायिनी।।३७।।
आरभ्य तद्दिनं देवी गङ्गा केशवसंनिधौ।
अविमुक्तेश्वरं ध्यायन्पश्चिमाभिमुखी स्थिता।।३८।।
पूजिता सा प्रयत्नेन काशीवासफलप्रदा।

किसी समय लिङ्गरूपी परमात्मा ने 'शान्ता' नाम शक्ति को पृथक् कर दिया जो काशी नाम से प्रसिद्ध हुई और शिव ने उस शक्ति से कहा कि तुम इस क्षेत्र की अधिष्ठात्री देवी हो। तुम मेरे भक्तों के हित में महामोक्षप्रदायिनी हो जाओ। उसी दिन से वह देवी शान्ता गंगा और केशव के सन्निधान में अविमुक्तेश्वर का चिन्तन करती हुई पश्चिमामुख स्थित हो गयी। प्रयत्न पूर्वक आराधित होने पर वह काशी वास का फल प्रदान करती है।'' 'यहाँ ध्यायन्' में पुल्लिङ्ग आर्ष है।।३६-३८।।

देव्युवाच-मूर्तिमत्याः काशिकायाः कोऽधिकारो महेश्वर।
क्षेत्रमूर्तिप्रभेदेन स्थितायाः किं प्रयोजनम्।।३९।।

हे प्रभो! साक्षात् विग्रहवती काशिका का क्या अधिकार है? क्षेत्र एवं मूर्ति भेद से उसके विद्यमान होने में क्या प्रयोजन है?।।३९।।

श्रीभगवानुवाच-

क्षेत्ररूपा तु या काशी मोचयेत्सर्वदेहिनः।
आधारभूता जीवानामाद्या प्रकृतिरव्यया।।४०।।
मूर्तिरूपा चित्स्वरूपाऽविमुक्तेश्वरसेवया।
पूर्णरूपा स्वमाहात्म्यं स्वयमेव विचारयेत्।।४१।।

क्षेत्र स्वरूपिणी जो काशी है वह सभी प्राणियों को मोक्ष प्रदान करती है। वह अविनाशी आद्या प्रकृति समस्त देवों की आधारभूताशक्ति है-।।४०-४१।।

आधारभूता जगतस्त्वमेका।

महीस्वरूपेण यतः स्थितासि।।४२।।

तथा मूर्त्तिरूपा काशिका चित् स्वरूपा है। वह अविमुक्तेश्वर की सेवा से 'पूर्ण' रूपिणी स्वयं अपनी महिमा का विचार करती है।।४२।।

(अभिप्राय यह है कि विग्रहवती भगवती काशिका 'पूर्णा' है जो काशी में वास करते हुये स्वतः अपनी महिमा का बोध कराती है। स्वमाहात्म्यप्रकाशन शिवार्चन का फल है। विग्रहवती पूर्णा काशिका का माहात्म्य उसी पूर्णा 'काशिका' द्वारा ही सुव्यक्त होगा।)

लिङ्गपुराणे तु विश्वेश्वरात्पश्चिमभागेऽस्याः स्थलमुक्तम्-

तत्र वाराणसी देवी स्थिता विग्रहरूपिणी।

मानवानां हितार्थाय स्थिता देवस्य पश्चिमे।।४३।।

वाराणसीं च यो दृष्ट्वा भक्त्या चैव नमस्यति।

तस्य तुष्टा च सा देवी वसतिं च प्रयच्छति।।४४।।

लिङ्ग पुराण में तो 'विश्वेश्वर' के पश्चिम भाग में काशी देवी का स्थल होना कहा गया है-

काशी विश्वेश्वर लिङ्ग के पश्चिम में मूर्त्ति स्वरूपा 'वाराणसी देवी' की स्थिति है। मानवों का कल्याण करने के लिये वह 'विश्वेश्वर' के पश्चिम में विद्यमान है। वाराणसी देवी को देखकर (दर्शन) जो भक्तिपूर्वक प्रणाम करता है उससे प्रसन्न होकर वह देवी काशी में निवास स्थान देती है।।४३-४४।।

अथ ध्यानम्-

श्यामा षोडशवार्षिकी सुकरुणां मूर्तिं दधाना वरं।

हस्ताभ्यामभयं च विश्वजननी विद्येति या गीयते।।४५।।

याऽदृष्टा स्मरणं गताऽपि सततं या कीर्तिता संस्तुता।

या दृष्टा नृभिरात्मतत्त्वममलं दद्याद् ध्रुवं काशिका।।४६।।

सोलह वर्षीया परमसौन्दर्यवती श्यामा करुणा की साक्षात् मूर्त्ति दोनों करकमलों में वर तथा अभय मुद्राओं को धारण करने वाली, विश्व की

जननी, विद्या के रूप में प्रेमपूर्वक गायी जाने वाली, जो देखे विना भी, स्मरण मात्र से, सतत कीर्तन एवं स्तुतिमात्र से तथा दर्शन कर लेने पर, मानवों को निर्मल आत्म-तत्त्व प्रदान करती है। यह ध्रुव अर्थात् अटल सत्य है। यही परम्बा आत्मज्ञानदायिनी काशिका है।।४५-४६।।

अथ प्रार्थना-

जय काशि महाविद्ये पतितानां च पावनि।
त्वामृते गतिरन्या न संसारे मज्जतामिह।।

प्रार्थना- हे पतितों को पवित्र बनाने वाली स्वयं प्रकाश स्वरूप महाविद्या स्वरूप भगवती काशिके! तुमको छोड़कर विकराल संसार पारावार में डूबे रहे प्राणियों की यहाँ कोई गति नहीं है। तुम्हीं सर्वोत्कृष्ट हो। अतः तुम्हारी 'जय हो।' ('जय' धातु उत्त्कर्षार्थक है। यहाँ नमन आक्षेपलभ्य है। 'तां प्रत्यस्मि प्रणतः' यह मम्मटानुगत वाक्यार्थ है।)

।। इति काशीमाहात्म्यश्रवणमहिमा समाप्ता।।

।। अथ काशी कथामहिमा ।।

ब्रह्मवैवर्ते-

सहस्त्रकार्याणि विहाय काश्यां काशीगुणान् संशृणुयाद्यथावत्।

क्षेत्रस्वरूपं प्रतिबुध्यते यैः श्रद्धा रतिः पापनिवृत्तिरुद्भवेत्।।१।।

काशीकथासंश्रवणेन सम्यगन्तःशुद्धिर्जायते वै नराणाम्।

अर्थात् – हजारों कार्यों का छोड़कर काशी में रहते हुए यथा विधि काशी के गुणों का श्रवण करना चाहिए। काशी क्षेत्र के वास्तविक स्वरूप का प्रतिबोध होने पर श्रोताओं के अन्तःकरण में श्रद्धा, प्रेम तथा असत् से निवृत्ति का प्रादुर्भाव होता है। काशी की कथा के सम्यक् अनुशीलन से मनुष्यों की अन्तःशुद्धि पूर्णरूप से हो जाती है।।१।।

तथा- **काशीकथाश्रवणमङ्गलपूर्णमूर्ति-**

मूर्तः स एव भगवाञ्शिवशान्तमूर्तिः।।२।।

अर्थात् – काशी माहात्म्य की कथा के श्रवण से अन्तःकरण में मङ्गलपूर्ण विग्रहवान् शान्तविग्रह शिव मूर्त्त प्रकट होता हैं। अर्थात् कथा श्रवण से चित्त शुद्धि होने पर मन शान्त एवं शिवमय हो जाता है।।२।।

तथा-**काश्यामागत्य सततं श्रोतव्या काशिसत्कथा।**

न विना श्रवणं पुण्यं पापं वा वेत्ति कश्चन।।३।।

विदित्वा यतते भूयो निस्ताराय पराय च।

अर्थात् – काशी में आकर निरन्तर परम पवित्र सत्कथा (काशी माहात्म्य) का श्रवण करना चाहिए। बिना सत्कथा का श्रवण किये कोई भी पाप एवं पुण्य को नहीं जान सकता। सत् असत् का ज्ञान प्राप्त करके प्राणी अपने उद्धार हेतु परतत्त्व की (शिव) प्राप्ति हेतु प्रयत्न करता है। कहा भी है-।।३।।

ज्ञानजन्या भवेदिच्छा, इच्छाजन्या कृतिर्भवेत्।

कृति जन्या भवेच्चेष्टा चेष्टाजन्यं फलं लभेत्।।४।।

तथा- स्वधर्मदानव्रतधर्मसाधनै-
रन्यैश्च योगादिभिराप्यते यत्।
पुण्यं दृढं तेन भवेन् मतिः सतां
काशीकथाश्रवणेन मानवानाम्।।५।।

श्लोकोर्धं श्लोकपादं वा नित्यं काशिकथामृतम्।
पिबन्ति ये महाभागास्तेषां भीतिर्न भैरवी।।६।।
काशीकथाश्रवणतः काशीकीर्तनतः स्मृतेः।
यत्फलं जायते नृणां न तद्योगादिभिः क्वचित्।।७।।

स्वधर्मानुष्ठान दान, व्रत रूपी धर्म के उपायों तथा अन्य अष्टांग योगादि साधनों द्वारा जो पुण्य दृढ़ होता है तथा सज्जनों को सद्बुद्धि प्राप्त होती है वह काशी कथाश्रवणमात्र से सुलभ हो जाती है। आधा श्लोक, श्लोक-चतुर्थांश भी यदि नित्य काशीकथापीयूष का निरन्तर पान करते रहें तो ऐसे महाभाग्यशालियों को भैरवी यातना नहीं होती। काशी कथा के श्रवण से काशी सङ्कीर्तन से, काशी के स्मरण से जो फल (अदृष्ट) प्राप्त होता है वह योग आदि से कभी भी नहीं होता है।।४-७।।

।। इति श्रीमन्नारायणभट्टविरचिते त्रिस्थलीसेतौ काशी कथामहिमा समाप्ता।।

।। अथ काशी नाममहिमा ।।

नारदीये- बहुनाऽत्र किमुक्तेन वाराणस्या गुणान्प्रति।
नामापि गृह्णतां काश्याश्चतुर्वर्गो न दूरतः।।१।।

अधिक क्या कहें! वाराणसी के गुणों की अपार महिमा है। काशी के नामग्रहण मात्र से 'धर्म अर्थ काम मोक्ष' रूप पुरुषार्थ चतुष्टय दूर नहीं अपितु आपके हाथ में ही है।।१।।

पाद्मे- काशीति वर्णद्वितयं स्मरंस्त्यजति पुद्‌गलम्।
यत्र क्वापि भवेत्तस्य कैलासे वसतिः स्फुटा।।२।।

पुद्‌गलम् = शरीरम्।

भूमण्डल में कहीं भी विद्यमान प्राणी 'काशी' इस दो अक्षरों का स्मरण करते हुए पुद्‌गल (शरीर) का त्याग करता है तो उसका कैलासवास स्पष्ट है। 'काशी' मन्त्र के उच्चारण मात्र से मनुष्य शिवसायुज्य प्राप्त कर लेता है।।२।।

स्कन्द महापुराण के अनुसार-

काशीकाशीतिकाशीति रसना रससंयुता।
यस्य कस्यापि भूयाच्चेत् स रसज्ञो न चेतरः।।३।।

काशी-काशी-काशी यह जिस किसी के भी जिह्वाग्र पर रस से संयुक्त हो जाती है वही वास्तव में रसज्ञ है।।३।।

तथा-तावद् गर्जन्ति पापानि ब्रह्महत्यादिकान्यलम्।
यावन्नाम न गृह्णन्ति काश्याः पापाचलाशनेः।।४।।
ब्रह्महत्यादि पापानि यस्या नाम्नोऽपि कीर्तनात्।
त्यजन्ति पापिनं काशी सा केनोहोपमीयते।।५।।

तथा– वाराणसीति काशीति महामन्त्रमिमं जपन्।
यावज्जीवं त्रिसन्ध्यं तु जन्तु जातु न जायते।।६।।
तत्क्षेत्रनामस्मरणात् न स भूयोऽभिजायते।।
यस्तु काशीति काशीति द्विस्त्रिर्जपति पुण्यवान्।
अपि सर्वपवित्रेभ्यः स पवित्रतरो महान्।।७।।
तथा– वाराणसीति काशीति रुद्रावास इति स्फुटम्।
मुखाद् विनिर्गतं येषां तेषां न प्रभवेद् यमः।।८।।
येन बीजाक्षरयुतं काशीति हृदि धारितम्।
अबीजानि भवन्त्येव कर्मबीजानि तस्य वै।।९।।
श्रुतं कर्णामृतं येन काशीत्यक्षरयुग्मकम्।
न समाकर्णयत्येव स पुनर्गर्भजां कथाम्।।१०।।
ब्रह्मवैवर्त्ते– यथा विष्णोः शङ्करस्यापि नाम्ना।
लोकः शोकं नाश्य मोक्षं प्रयाति।।
वाराणस्या नाम गृह्णन् विशेष्यात्–
तीर्त्वा मृत्युं मृत्युजेता स्वयं स्यात्।।११।।

पाप तभी तक भयङ्कर गर्जना करते हैं, ब्रह्महत्या आदि अपना दुष्प्रभाव प्रदर्शित करते हैं, तथा पाप–पर्वत रूपी वज्र प्रभाव दिखलाते हैं, जब तक जीव काशी का नाम ग्रहण नहीं कर लेते। ब्रह्महत्यादि पाप जिसके नाम स्मरण कीर्त्तन मात्र से पापी जीव को त्याग देते हैं वह काशी है। 'वाराणसी' 'काशी' महामन्त्रों का आजीवन त्रिकालसन्ध्या में जप करते हुए प्राणी का पुनर्जन्म नहीं होता है। परम पवित्र काशी क्षेत्र के नाम स्मरण मात्र से जीव पुनः गर्भ में नहीं आता है। जो प्राणी काशी–काशी इसका दो तीन बार जप करता है वह पुण्यवान् तथा परम पवित्रों से भी अनेक गुणित पवित्र तथा महान् है।

'वाराणसी' 'काशी' 'रुद्रावास' शब्द स्पष्ट रूप से जिसके मुख से निकल जाता है उस पर यमराज का शासन निष्प्रभावी हो जाता है। जिसने 'बीजाक्षर युक्त काशी' को हृदय में धारण कर लिया है उसके कर्मबीज निर्बीज हो जाते हैं। कर्णामृत काशी नामक दो अक्षरों के युग्म मन्त्र का गुरुमुख से यथा विधि श्रवण कर लिया है उसे कभी भी पुनः गर्भ में जाने का प्रसंग सुनाई नहीं पड़ता है।

ब्रह्मवैवर्त्तमहापुराण के अनुसार जैसे विष्णु एवं शङ्कर के नामोच्चारण से लोक (प्राणी) शोक रहित होकर मोक्ष (निरतिशयानन्द) प्राप्त कर लेता है वैसे ही, उससे भी अधिक महिमामय वाराणसी के नामग्रहण, नामस्मरण मात्र से प्राणी मृत्यु का सन्तरण करके स्वयं मृत्युञ्जय हो जाता है।।४-११।।

।। नाममहिमा प्रकरण का भाषानुवाद सम्पूर्ण ।।

।। अथ काश्यादिशब्दनिर्वचनम् ।।

काशीखण्डे-**काशतेऽत्र यतो ज्योतिस्तदनाख्येयमीश्वर!**

अतो नामापरं चास्तु काशीति प्रथितं विभो।।१।।

तथा- **काशी ब्रह्मेति विख्यातं तद् विवर्तो जगद् भ्रमः।**

अविमुक्तं तदेवाहुः काशीति ब्रह्मवादिनः।।२।।

हे ईश्वर! विभो! इस ब्रह्माण्ड में जो ज्योति प्रदीप्त है एवं अवर्णनीय है। अत: इसका नामान्तर काशी प्रसिद्ध हो। काशी ब्रह्म है उसका विवर्त्त अतात्त्विक अन्यथाभाव भ्रमरूप है। उसी काशी को ब्रह्मवादिऋषिगण 'अविमुक्त' कहते हैं।।१-२।।

मात्स्ये ईश्वरवाक्यम्-

विमुक्तं न मया यस्मान् मोक्ष्यते वा कदाचन।

महत् क्षेत्रमिदं तस्मादविमुक्तमिदं स्मृतम्।।३।।

मत्स्यपुराण में ईश्वर का वचन है कि मैंने काशी का कभी त्याग नहीं किया और न कभी करूँगा। इसीलिये यह महिमा मण्डित काशी क्षेत्र 'अविमुक्त' नाम से प्रसिद्ध है।।३।।

काशीखण्डेऽगत्स्य उवाच-

अविमुक्तमिदं क्षेत्रं कदाऽऽरभ्य भुवस्तले।

परां प्रथितिमापन्नं मोक्षदं चाभवत् कथम्।।४।।

वाराणसीति काशीति रुद्रावास इति प्रभो।

महाश्मशानमिति च कथं ख्यातं शिखिध्वज!।।५।।

स्कन्द उवाच-**मुने! प्रलयकालेऽपि न तत्क्षेत्रं कदाचन।**

प्रविमुक्तं शिवाभ्यां यदविमुक्तं ततः स्मृतम्।।६।।

यद्यपि मन्दराचलगतेन सदाशिवेन चिरकालं क्षेत्रं त्यक्तमेव

तथापि लिङ्गरूपेण कदापि न त्यक्तमित्याशयः। अत एव तत्रैवोक्तम्-

मन्दराद्रिगतेनापि क्षेत्रं नैतत् पिनाकिना।
विमुक्तं लिङ्गरूपेण अविमुक्तं ततः स्मृम् इति।।७।।
यियासुना च देवेन मन्दरं चित्रकन्दरम्।
निजमूर्त्तिमयं लिङ्गमविज्ञातं विधेरपि।
स्थापितं सर्वसिद्धीनां साधकेभ्यः समर्पकम्।
विपन्नानां च सिद्धीनां दातुं नैःश्रेयसीं श्रियम्।।८।।
सर्वेषामिह संस्थानां क्षेत्रं चैवाभिरक्षितुम्।
नामाविमुक्तमभवदुभयोः क्षेत्रलिङ्गयोः।।९।।

ततश्च- **'आदिलिङ्गमिति प्रोक्तं श्रीविश्वेश्वरपूजितम्' इत्युपक्रमादविमुक्तेश्वरलिङ्गरूपेण न विमुक्तमित्यभिसन्धिः।**

अभिप्राय यह है काशी खण्ड के अनुसार अगस्त्य महर्षि ने शिखिरध्वज कार्तिकेय से पूछा कि- 'भूमण्डल में यह क्षेत्र कब से प्रसिद्धि की पराकाष्ठा को प्राप्त हो गया तथा प्राणिमात्र को मोक्ष प्रदान करने वाले क्षेत्र के रूप में स्थापित हुआ? उत्तर में षडानन ने परमशैव महर्षि के प्रश्नों के उत्तर में कहा कि इस क्षेत्र का भवानीशङ्कर महाप्रलय (नित्य, नैमित्तिक, प्राकृत एवं आत्यन्तिक) में भी त्याग नहीं करते हैं। इसीलिये इस परम दिव्यक्षेत्र को 'अविमुक्त' कहा जाता है।

इस 'स्कान्द वाक्य' पर महामनीषी पण्डित नारायण भट्ट कहते हैं कि यद्यपि मन्दराचल गये हुए सदाशिव ने चिरकाल तक इस क्षेत्र को त्यागा था, तथापिं लिङ्ग रूप में विद्यमान रहे ही'' यही स्कान्दवचन का अभिप्राय है। इसी कारण वहीं यह भी कहा गया है कि मन्दराचल पर्वत पर गये होते हुए भी पिनाकपाणि ने इस क्षेत्र का परित्याग नहीं किया और लिङ्गरूप से काशी में बने ही रहे।' इसीलिये 'काशी' को 'अविमुक्त' क्षेत्र कहा जाता है।

विचित्र कन्दराओं से मण्डित मन्दराचल को प्रस्थान करते हुए अपने विग्रह का सनातन, सर्वार्थविभासक सर्वप्रकाशक लिङ्ग स्थापित कर दिया था। जिसे पितामह ब्रह्मा भी नहीं जानते थे। वह महादेव का स्वमूर्त्तिमय

लिङ्ग साधकों को ऐहिक-आमुष्मिक समस्त फलों को देने वाला है। विपद्ग्रस्तों तथा परमार्त्त प्राणियों को परमकल्याण नि:श्रेयस ऐश्वर्य प्रदान करता है। सभी श्रौत-स्मार्त्त धर्म, परम्पराओं एवं सम्प्रदायों (संस्था) की अधिष्ठानभूमि काशी क्षेत्र की रक्षा हेतु ब्रह्मा द्वारा भी अनभिज्ञात अविमुक्तेश्वर लिङ्ग इसी क्षेत्र में होने के कारण काशी भवानीशङ्कर से कभी भी परित्यक्त नहीं हुई और न तो हो ही सकती है। इसीलिये काशी 'अविमुक्त क्षेत्र है।' क्षेत्र एवं लिङ्ग दोनों का नाम ''अविमुक्त क्षेत्र एवं अविमुक्तेश्वर लिङ्ग है।''

अत एव 'आदिलिङ्गमिदं प्रोक्तं श्रीविश्वेश्वरपूजितम्' इस उपक्रम वाक्य से स्पष्ट है कि साम्ब शिव अविमुक्तेश्वर लिङ्ग रूप से काशी में सदा विद्यमान थे, हैं और रहेंगे। इस प्रकार स्पष्ट है कि महादेव कभी काशी का त्याग नहीं करते। अत एव काशी क्षेत्र अविमुक्त क्षेत्र नाम से प्रसिद्ध है। यह अभिसन्धि है।।४-९।।

लैङ्गे- **अविशब्देन पापं तु कथ्यते वेदवादिभिः।**
तेन पापेन तत्क्षेत्रं वर्जितं वरवर्णिनि।।१०।।

लिङ्ग महापुराण के अनुसार-'वेदवादी' महर्षियों ने 'अवि' शब्द का पाप अर्थ किया है। अत: पापवर्जित क्षेत्र होने के कारण इसे 'अविमुक्त' कहते हैं।।१०।।

पाद्मे- **आनन्दकाननं तद्धि शङ्करस्यापि वल्लभम्।**
न विमुञ्चति विश्वात्मा अविमुक्तं ततः स्मृतम्।।११।।

पद्म महापुराण के अनुसार आनन्द-कानन तो शङ्कर को भीं अतिप्रिय है। अत: विश्वात्मा शङ्कर इसका कभी परित्याग नहीं करते। इसी लिये इसे 'अविमुक्त' कहते है।।११।।

तथा काशीखण्डे-

अस्यऽऽनन्दवनं नाम पुराऽकारि पिनाकिना।
क्षेत्रस्यानन्दहेतुत्वादविमुक्तं निरन्तरम्।।१२।।

तथा- **ये तु वर्षेषवो देवाः दिवि देवि प्रकीर्तिताः।**
वातेषवोऽन्तरिक्षे ये ये भुव्यन्नेषवःप्रिये!
रुद्रा दश दश प्राच्यमवाचीप्रत्यगुदक्स्थिताः।

ऊर्ध्वदिक्स्थाश्च ये रुद्राः पठ्यन्ते वेदवादिभिः।।१३।।
असंख्याताः सहस्राणि ये रुद्रा अधिभूतले।
ते सर्वेभ्योऽधिकाः काश्यां जन्तवो रुद्ररूपिणः।।१४।।
रुद्रावासस्ततःप्रोक्तमविमुक्तं घटोद्भव!।

तथा- **'श्म'शब्देन शवः प्रोक्तः शानं शयनमुच्यते।**
निर्वचन्ति श्मशानार्थं मुने शब्दार्थकोविदाः।।१५।।
महान्त्यपि च भूतानि प्रलये समुपस्थिते।
शेरतेऽत्र शवा भूत्वा श्मशानं च ततो भवेत्।।१६।।
असिश्च वरणा चैव क्षेत्ररक्षाकृते कृते।
वाराणसीति विख्याता तदारभ्य महामुने।।१७।।

काशी खण्ड के अनुसार- इस क्षेत्र का आनन्दवन नामकरण पूर्वकाल में पिनाकपाणि भगवान् शङ्कर ने किया। यह क्षेत्र आनन्द का मूलकारण होने के कारण, निरन्तर आनन्द प्रदानस्वरूप 'अविमुक्त' कहा गया है। महर्षि अगस्त्य के यहाँ श्रोता के रूप में घटोद्भव सम्बोधित है।

प्रिये!! जो वर्षा को अपना इषु (अस्त्र) बनाते हैं, तथा देवलोकवासी देव (रुद्र) हैं, जो वायु को अपना अस्त्र बनाने वाले रुद्र हैं और अन्तरिक्ष में रहते हैं, तथा भूमि में रहने वाले अन्न को ही बाण बना लेते हैं, वे दश तथा दशो दिशाओं पूर्व दक्षिण और पश्चिम, चारों विदिशाओं अग्नि-नैऋत्य, वायव्य, ईशान एवं अग्नि तथा अधो दिशाओं में रुद्र के रूप में विद्यमान हैं तथा वेदवादियों द्वारा पढ़े जाते हैं, वे सब असंख्यात सहस्रों रुद्र ब्रह्माण्ड में विद्यमान हैं वे सब जीव अधिक रूप से काशी में रुद्र रूप में रहते हैं। अतः यह काशी 'रुद्रावास' है। इसलिए, अगस्त्य जी!! यह रुद्रावास 'अविमुक्त' कहा जाता है।।१२-१७।।

पद्मे- **लिङ्गं लिङ्गशरीरस्य विश्लेषं गमयेत् परम्।**
तेन लिङ्गमिति ख्यातमपवर्गैकसाधनम्।।१८।।

लिंग (शिव) लिंग शरीर (सूक्ष्म शरीर) का विच्छेद स्पष्ट करता है।

इसी लिए 'लिङ्ग' विख्यात है। यह शिव लिङ्ग 'अपवर्ग' अर्थात् आधिदैविक, आधिभौतिक एवं आध्यात्मिक दुःखों की आत्यन्तिक निवृत्ति का अद्वितीय साधन है। यह पद्म पुराण का कथन है।।१८।।

ब्रह्मवैवर्त्ते-**महातत्त्वमये पात्रे ब्रह्म शुद्धं सनातनम्।**
मायाप्रवेशरहितमविमुक्तं तदुच्यते।।१९।।

तथा- **आनन्दकन्दबीजानामङ्कुराणि यतस्ततः।**
ज्ञेयानि सर्वलिङ्गानि तस्मिन्नानन्दकानने।।२०।।
मम लिंगानि सर्वाणि ह्यङ्कुराणीव सर्वशः।
आनन्दादुतितानीति ह्यानन्दवनमुच्यते।।२१।।

महातत्त्वमय पात्र में शुद्ध सनातन ब्रह्म, माया के प्रवेश से रहित है। यह आनन्द कानन माया (मलिन सत्व प्रधान अविद्या) से सर्वथा ही अनाक्रान्त है। इसमें सदा सर्वदा ब्रह्मानन्द का साम्राज्य रहा है। सदा सर्वज्ञ माया रहित निर्मल निष्कलङ्क ब्रह्म से कभी भी शून्य न होने के कारण इसे 'अविमुक्त' कहते हैं। निर्विशेष ब्रह्म ही क्षेत्र लिङ्ग रूप में अविमुक्त ब्रह्म है। वास्तव में 'आनन्दो ब्रह्मेति व्यजानात्' श्रुति की काशी परा व्याख्या आकलनीय है।

यतस्ततः यहाँ आनन्दकन्द बीज आनन्दवन में विद्यमान रहते हैं। अतः आनन्द से आविर्भूत होने के कारण इस अविमुक्त काशी को आनन्दवन भी कहते हैं।।१९-२१।।

लिङ्ग महापुराण में कहा गया है-

अविमुक्तं परं क्षेत्रं शङ्करस्य सदैव हि।
तन्नाम्ना तत्प्रसिद्धं च त्रैलोक्ये शूलपाणिनः।।
निम्नागाभ्यां पुरी सा च नाम्ना वाराणसी पुरी।।२२।।

हे मुनिनाथ! अविमुक्त यह श्रेष्ठतम क्षेत्र है। यह शूलपाणि के नाम से ही त्रैलोक्य में प्रथित है। वह दो नदियों वरणा और असी के मध्य में वाराणसी नाम से प्रसद्धि है।।२२।।

।। इति श्रीमन्नारायणभट्टविरचिते त्रिस्थलीसेतौ काश्यादिशब्दनिर्वचनम् समाप्तः ।।

।। अथ काशी स्मरणमहिमा ।।

नारदीये- **योजनानां शतस्थोऽपि योऽविमुक्तं स्मरेद् हृदि।**
बहुपातकपूर्णोऽपि न स पापैः प्रबाध्यते।।१।।

अर्थात् - सैकड़ों योजन दूर होने पर भी जो हृदय से 'अविमुक्त' का स्मरण करता है। वह अनेक पातकों से परिपूर्ण होने पर भी पापों से मुक्त हो जाता है।।१।।

ब्रह्मवैवर्त्ते- **स्मरन्ति ये नराः काशीं यत्र कुत्रापि संस्थिताः।**
तेऽप्यघौघविनिर्मुक्ताः भवन्ति ज्ञानभागिनः।।२।।

तथा- **मनसा यैः काशिकायाः स्मृतमौदार्यमार्यकैः।**
तेषां मनो न स्मरति स्मरारिनगरीं विना।।३।।

जहाँ कही भी रहते हुए जो मानव काशी का स्मरण करते रहते हैं, उनका मन कामदेव के दाहक भगवान् शङ्कर की नगरी को छोड़कर अन्य का स्मरण नहीं करता।

काशीस्मरण मात्र से मन में शिव के प्रति अनन्य निष्ठा का भाव उत्पन्न हो जाता है। शिवानन्यता काशीस्मरण का अव्यर्थ फल है।।२-३।।

नारदीये काशीखण्डे च-

मम प्रियस्य क्षेत्रस्य योऽविमुक्तस्य संस्मरेत्।
प्राणप्रयाणसमये दूरगोऽप्यघवानपि।।४।।
स पापपूगमुत्सृज्य स्वर्गभोगान् समश्नुते।
काशीस्मरणपुण्येन स्वर्गाद् भ्रष्टो हि जायते।।५।।
पृथिव्यामेकराड् भूत्वा भुक्त्वा भोगाननेकशः।
प्राप्याविमुक्तं तत्पुण्यान् निर्वाणपदभाग्भवेत्।।६।।

नारदीयपुराण तथा काशीखण्ड के वचनानुसार शङ्कर का कथन है कि मेरे प्रिय क्षेत्र अविमुक्त का, दूरगामी पापी यदि प्राणान्त काल में भी स्मरण करता है वह पाप समूहों को नष्ट करके स्वर्गीय भोगों को प्राप्त करता है। काशी स्मरण के पुण्य से वह स्वर्गभोग से पुण्य के क्षीण होने पर भूलोक में 'एकराट् सम्राट्' होने पर विविध प्रकार के भोगों का भौम सुख प्राप्त करके अन्त में काशी स्मरण जनित पुण्य के फलस्वरूप निर्वाण पद प्राप्त कर लेता है।।६।।

(विशेष यह कि 'निर्वाण' शब्द मोक्षवाची श्रुति स्मृति पुराण प्रसिद्ध है। बौद्धों ने 'निर्वाण' के अपभ्रंश 'निव्वान' को ग्रहण कर लिया है। उसका अर्थ शून्यता है जो अनानन्दरूप है। किन्तु वैदिक निर्वाण पुनर्जन्मरहित निरतिशयानन्द है।)

कौर्मे- **ये स्मरन्ति परं कालं विदन्ति च पुरीमिमाम्।**
तेषां विनश्यति क्षिप्रमिहामुत्र च पातकम्।।७।।

जो अन्त समय में काशी का स्मरण करते हैं तथा काशी लाभ कर लेते हैं उनके इहलोक एवं जन्मान्तरीय पारलौकिक पाप भी नष्ट हो जाते है।।७।।

ब्रह्मपुराणे-**संस्मरिष्यन्ति ये स्थानमविमुक्तं सदा नराः।**
निर्धूतसर्वपापास्ते भविष्यन्ति गणोपमाः।।८।।

जो मनुष्य सर्वदा अविमुक्त क्षेत्र का स्मरण करते रहते हैं वे सभी पापों से निर्धूत अर्थात् मुक्त होकर शिव के पार्षद हो जाते हैं।।८।।

ब्रह्मवैवर्त्ते-**काशी काशीति काशीति बहुधा संस्मरन् द्विजः।**
न पश्यतीह नरकान् वर्त्तमानान् स्वयं कृतान्।।९।।

स्वयं कृतान् अर्थात् **स्वकृतकर्मजान् इत्यर्थः।**

ब्रह्मवैवर्त्तपुराण में कहा गया है कि 'काशी-काशी-काशी' इस मन्त्र का अनेकशः सम्यक् स्मरण करता हुआ द्विज (पुंस्त्रीसंयोगज प्राणी) स्वयं द्वारा किये गये नरकों (दुर्गतियों) का दर्शन भी नहीं कर सकता अर्थात् वह निर्मल निष्पाप हो जाता है।।९।।

भवः- **अद्यारभ्य महाभागाः ये स्मरिष्यन्ति काशिकाम्।**
तेषां पापक्षयो भूयो मोक्षबीजं भवत्यनु।।१०।।

अविमुक्तं महाक्षेत्रं स्मरन् प्राणाँस्तु यस्त्यजेत्।
दूरदेशान्तरस्थोऽपि सोऽपि जातु न जायते।।११।।
आनन्दकाननं यस्य चित्तं संस्मरते सदा।
तत्क्षेत्रनामस्मरणान्न स भूयोऽभिजायते।।१२।।

तथा- **काशीस्मरणमात्रेण किं चित्रं यदघं व्रजेत्।**
गर्भवासोऽपि नश्येत विश्वेशानुग्रहात् परात्।।१३।।

तथा- **तिष्ठन् गच्छन् स्वपन् भुञ्जन् कर्म कुर्वन् हसन्नपि।**
योऽविमुक्तं स्मरेद् देवि तस्य जन्मभयं कुतः?।१४।।

तथा- **काश्यां येषां नाम गृह्णन्ति लोकाः।**
बीजं तेषां जायते मोक्षमार्गे।
काशीं ये वै संस्मरन्त्यन्यदेशे।
तानप्यात्मा शङ्करस्तारयेच्च।।१५।।

स्वयं 'भव' विश्वनाथ का कथन है कि महाभागों! आज से जो भी 'काशी' का स्मरण करेंगे उनका पाप नष्ट हो तथा मोक्ष का बीज बने। महाक्षेत्र, अविमुक्त का स्मरण करते हुए, काशी सें दूर देशान्तरों में जो शरीर त्याग करता है वह भी पुनर्जन्म से मुक्त हो जाता है। जिसका चित्त सदा 'आनन्दकानन' का स्मरण करता रहता है, वह उस अविच्छिन्न स्मृति के प्रभाव से पुनर्जन्म से मुक्त हो जाता है।

बैठे, चलते सोते, खाते, कर्म करते, हँसते हुए भी अर्थात् जिस किसी भी स्थिति में रहते हुए मानव (चेतन मात्र) को पुनः जन्मका भय नहीं होता- 'न स पुनरावर्त्तते।'

तथा- काशी में जो प्राणी 'नाम' स्मरण करते हैं उनके मोक्ष मार्ग का बीज आविर्भूत हो जाता है। अन्य देश में भी जो 'काशी' का स्मरण कर लेते हैं उनका भी उद्धार सर्वप्राणिपरप्रेमास्पद शङ्कर कर ही देते हैं।।१०-१५।।

।। इति नाम स्मरणमहिमा भाषानुवाद पूर्ण ।।

।। अथ स्तुतिमहिमा ।।

काशीखण्डे-

यः काशीं स्तौति मेधावी यः काशीं हृदि धारयेत्।
तेन तप्तं तपस्तीव्रं तेनेष्टं क्रतुकोटिभिः।।१।।

तथा भव- **मुने न मे प्रियस्तद्वद् दीक्षितो मम पूजकः।**
यादृक् प्रियतरः सत्यं काशीस्तवनलालसः।।२।।
तादृक् तुष्टिर्न मे दानैस्तादृक् तुष्टिर्न मे मखैः।
न तुष्टिस्तपसा तादृक् यादृक् स्यात् काशिसंस्तवैः।।३।।
आनन्दकाननं येन स्तुतमेतत् सुचेतसा।
तेनाहं संस्तुतः सम्यक् सर्वैः सूक्तैः श्रुतीरितैः।।४।।

काशीखण्ड में काशी स्तुति की महिमा का वर्णन करते हुए कहा गया है कि जो काशी की स्तुति करता है, जो मेधावी काशी को हृदय में धारण करता है मानो उसने तीव्र तप कर लिया तथा उसने करोड़ों यज्ञ सम्पन्न कर लिये। भाव यह है कि- (तीव्र तप एवं महार्घ यज्ञ करने में असमर्थ व्यक्ति यदि काशी का स्मरण मात्र करता रहे तथा काशी को हृदय में धारण कर ले तो उसे उक्त समस्त कर्मों का फल प्राप्त हो आता है। 'काशी' की स्तुति एवं काशी का मनन चिन्तन शिव चिन्तन है। शिवस्मरण व शिव चिन्तन काशी चिन्तन है। काशी साम्ब सदाशिवस्वरूपा है। दान यज्ञादि सब शिवप्रीत्यर्थ है। काशीस्मरण मनन से शिव की सन्तुष्टि के सभी प्राणी अधिकारी है। जबकि श्रौतस्मार्त्त यज्ञादि द्विजैकसम्पाद्य हैं। अतः काशीचिन्तनमनन का उनकी अपेक्षा विशेष महत्त्व है।)

हे मुने!! शिवदीक्षासम्पन्न मेरा पूजक मुझे उतना प्रिय नहीं है जितना प्रियतर मुझे काशीदर्शन की उत्कट उत्कण्ठा वाला प्राणी है, यह सत्य

है। मुझे वैसी तुष्टि न तो दान से होती है न यज्ञों से होती है, न तो उग्र तप से ही मुझे उतनी सन्तुष्टि मिलती है जितनी की काशी की स्तुति से हो जाती है। जिस तेजस्वी मानव (प्राणी) ने काशी की स्तुति कर ली मानो उसने सम्पूर्ण वैदिक सूक्तों से मेरी स्तुति कर ली॥१-४॥

वाराणसी स्तुतिमपि यो निशम्यानुमोदते।
अपि ब्रह्माण्डमखिलं ध्रुवं तेनानुमोदितम्।।५।।

अर्थात् वाराणसी की स्तुति को सुनकर जो उसका अनुमोदन करता है मानो उसने चराचर ब्रह्माण्ड का अनुमोदन कर लिया अर्थात् काशी की स्तुति करने सुनने तथा अनुमोदन करने में शिवानन्द शिव तथा शिवामय सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड का अनुमोदन पूर्ण हो जाता है॥५॥

।। इति स्तुति महिमा ।।

।। अथ काशी गमनमहिमा ।।

ब्रह्मवैवर्त्ते- **प्रसङ्गतो ये गमनं प्रकुर्युः।**

व्यापारतः प्रेषणेनापि केचित्।।१।।

बध्वापि ये काशिकां सम्प्रणीताः।

ते स्युः कृतार्थाः श्रुतिवाद एषः।।२।।

गमने च विष्णु प्रार्थना तत्रैव-

जय केशव देवेश जय काशीप्रियाच्युत।

काशीं प्रापय देवेश देहि वासं जनार्दन।।३।।

सनत्कुमारसंहितायाम्-

वाराणसीमेव यदा प्रवृत्तो-

गन्तुं नरस्तप्य समस्तपापम्।

विनाश्य सार्धं गणकैः गुणैः स्वैः।

प्रीतः सुहृत् तृप्यति धर्मराजः।।४।।

किसी भी प्रसङ्ग से, व्यापार हेतु, अथवा किसी के द्वारा भेंजे जाने से या बाँधकर भी यदि काशी में स्थापित कर दिये जाँय तो भी वे कृतार्थ हो जाते हैं, यह वैदिक सिद्धान्त है। काशी गमन में विघ्नविघात हेतु भगवान् विष्णु से प्रार्थना का भी वही निर्देश है। प्रार्थना मन्त्र का अर्थ है-

हे केशव!! आप की जय हो! हे काशी प्रिय! हे अच्युत! आप कृपा करके मुझे काशी प्राप्त करा दें। कृपा करके मुझे काशी में स्थान प्रदान करें। हे जनार्दन! आज मेरे ऊपर कृपा करें। जिससे मुझे काशी निवास प्राप्त हो। क्योंकि आप काशीप्रिय विश्वेश्वर के भी प्रिय है।

सनत्कुमार संहिता के अनुसार- मानव जब वाराणसी को प्रस्थान करने में प्रवृत्त होता है उसी समय उसके समस्त पापों को नष्ट करके यमराज अपने समस्त गणकों (पाप-पुण्य के लेखाकारों) के साथ उसके (काशी जाने वाले के) सुहृद् वन जाते हैं तथा परम सन्तुष्ट होते हैं। काशी प्रस्थान के संकल्प मात्र से यम जीव के पापों को निरस्त कर देते हैं॥१-४॥

सनत्कुमार संहिता में ही कहा है-

कृत्स्नस्य लोकस्य नृपस्य बन्धोः।
मित्रस्य पित्रोर्महतो गुरोर्वा।।५।।
याच्ञामथाऽऽज्ञामथवोपदेशाम्।
कुर्यान्न काश्यां गमनस्य विघ्नम्।।६।।

सम्पूर्ण लोक के सम्राट, भाई-मित्र, माता-पिता, ज्येष्ठ अथवा गुरु की याचना, आज्ञा अथवा उपदेश आदि कारणों से भी काशी यात्रा में विघ्न नहीं करना चाहिए। उपर्युक्त कारणों द्वारा काशी यात्रा में विघ्न उपस्थित कर काशीवास में व्यवधान उत्पन्न करना महान् अपराध है॥५-६॥

काशीखण्डे-

ब्रह्महा योऽभिगच्छेद् वै दैवाद् वाराणसीं पुरीम्।
तस्य क्षेत्रस्य माहात्म्याद् ब्रह्महत्या निवर्त्तते।।७।।

काशीखण्ड में कहा है कि ब्रह्महत्यारा, संयोग से भी यदि वाराणसी पुरी को जाये तो उस क्षेत्र की महिमा तथा लोकोत्तर प्रभाव से 'ब्रह्म हत्या' निवृत्त हो जाती है॥७॥

कौर्मे- **आगच्छतामिदं स्थानं सेवितुं मोक्षकांक्षिणाम्।**
मृतानां च पुनर्जन्म न भूयो भवसागरे।।८।।

मोक्षप्राप्ति की आकांक्षा से इस अविमुक्त क्षेत्र काशी का सेवन करने के लिए आने वाले मनुष्यों के मरने पर पुनः संसार में जन्म नहीं होता है॥८॥

लैंगे- काशीं प्रकृत्य-

सत्यं सत्यं पुनः सत्यं त्रिसत्यं नान्यतः शुभे।
शीघ्रं तत्रैव संयान्तु यदीच्छेन्मामकं पदम्।।९।।

पार्वती के प्रति शङ्कर का कथन है कि प्रिये!! सत्य है, सत्य है, पुनः तृतीय वार सत्य है कि यदि जीव मेरा स्थान प्राप्त करना चाहते हैं तो उन्हें अविमुक्त क्षेत्र काशी की यात्रा करनी चाहिए।।९।।

तथा काशी खण्डे-

उड्डीय सर्वतो देशाद्यानं वाराणसीं प्रति।
उड्डीयानो महाबन्ध एव मुक्त्यै प्रकल्पते।।१०।।

सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड में सर्वत्र उड़ते-उड़ते परिश्रान्त व्यक्ति का काशी की ओर प्रस्थान ही उड्डीयान है। यह 'उड्डीयान' मोक्ष प्रदान करता है।।१०।।

(त्रिंस्थलीसेतुकार 'योग' के महान् वेत्ता हैं। उनके अनुसार योगवर्णित 'उड्डीयान बन्ध' प्रसिद्ध है। यहाँ तो काशीगमन ही उड्डीयान[१] है जो 'बन्धमुक्तिप्रद' है। 'ललिता सहस्रनाम' में कहा गया है 'ओड्याणपीठ निलया।' अर्थात् 'ओड्याण पीठ' योग का 'उड्डीयान बन्ध' है जो शाक्त उपासना में शक्तिपीठ के रूप में भी प्रसिद्ध है।)

काशी खण्ड के बयालीस वें अध्याय में 'मृत्यु' के अनेक चिन्हों का वर्णन करते हुए स्कन्द कहते हैं-

एतानि कालचिह्नानि सन्त्यन्यानि बहून्यपि।
ज्ञात्वाऽभ्यस्येन्नरो योगमथवा काशिकां श्रयेत्।।११।।

तथा- **सर्वेषामिह पापानां प्रायश्चितचिकीर्षया।**
निःशङ्कैरेव वक्तव्यं प्रमाणज्ञैरिदं वचः।।१२।।
पुरश्चरणकामश्चेद् भीतोऽसि यदि पापतः।
मन्यसे यदि नः सत्यं वाक्यं शास्त्रप्रमाणतः।।१३।।
ततः सर्वं परित्यज्य कृत्वा मनसि निश्चयम्।
आनन्दकाननं याहि यत्र विश्वेश्वरः स्वयम्।।१४।।

इन मृत्यु के चिह्नों तथा अन्यान्य बहुत से चिह्नों को जान कर मनुष्य या तो योगाभ्यास करे अथवा काशी का आश्रय करें। यदि पापों से डरकर

१. उड्डीयान = विभिन्न देशों, योनियों में संचक्रमण करने वाला।

'पुरश्चरण' करने में तत्पर हो तो, यदि शास्त्र प्रमाण एवं मेरे वचनों को सत्य मानते हो तो समस्त लिप्साओं का परित्याग करके आनन्द-कानन अर्थात् काशी चले जाओ। जहाँ विश्वेश्वर स्वयं विराजमान है॥११-१४॥

मत्स्यपुराण के अनुसार-

यदि पापो यदि शठो यदि वाऽधार्मिको नरः।
मुच्येत सर्वपापेभ्यो ह्यविमुक्तं व्रजेद्यदि।।१५।।
'तथा अविमुक्तं सदा देवि ये व्रजन्ति सुनिश्चिताः।
ते तिष्ठन्तीह सुश्रोणि मद्‌भक्ताश्च त्रिविष्टपे।।'१६।।

तथा- **दूरं मे मरणं युवाहमधुना धार्यं न चित्ते त्विति।**
श्रोतव्यो निभृतं कृतान्तमहिषग्रैवेयघण्टारवः।।१७।।
नैकट्यात् प्रकटोत्कटश्रुतिपुटीं सम्प्राप्य हित्वा ततो
जीर्णां पर्णकुटीं ततः पटुमतिर्गच्छेत् पुरीं धूर्जटेः।।१८।।

यदि पापी, यदि शठ हो अथवा अधार्मिक (धर्मनिरपेक्ष) मनुष्य हो तो यदि वह अविमुक्तक्षेत्र काशी चला जाय तथा वास करे तो सभी पापों से मुक्त हो जाता है।

'हे देवि! जो सदैव काशी जाते रहते हैं तथा काशी के प्रति निष्ठा दृढ़ है, काशीवास करते हैं तथा वे मेरे भक्त है। तो समझे कि वे 'स्वर्ग' में वास करते हैं।

तथा- 'मेरी मृत्यु दूर है क्योंकि मैं अभी युवा हूँ' यह बात कभी भी चित्त में नहीं लानी चाहिए। हमेशा निरन्तर यमराज के भैंसे के गले में बंध हुई घण्टाध्वनि का श्रवण करते रहना चाहिए। अत्यन्त समीप होने के कारण यम के उत्कट घण्टाध्वनि को कर्णकुहरों के समीप प्राप्त संसार का त्याग करके बुद्धिमान् मनुष्य को चाहिए कि वह शीघ्र काशी में जाकर वास करें। सबका तात्पर्य यह है कि 'जीवन में केश को मृत्यु ने जकड़ लिया है' ऐसा मान कर काशी सेवन करना चाहिए। नीति भी यही कहती है कि-'गृहीत इव केशेषु मृत्युना धर्ममाचरेत्'॥१५-१८॥

ब्रह्मवैवर्त्ते-

शृण्वन्तु लोकाः परमार्त्तियुक्ताः रहस्यमन्त्रं परमादरेण।
कलौ विनष्टव्रतधैर्यवीर्याः गच्छन्तु काशीं परमार्थराशिम्।।१९।।
वाराणस्यां महातीर्थे नरः पापाद्विमुच्यते।
सप्तजन्मकृतात् पापात् गमनादेव मुच्यते।।२०।।

ब्रह्मवैवर्त्त के अनुसार- सभी दुःखों से घिरे हुए प्राणी आदरपूर्वक सुने!! यह मन्त्र परम रहस्यात्मक है। कलियुग में भ्रष्ट व्रत-धैर्य और वीर्य वाले सभी प्राणी समस्तरहस्यमयी परमार्थों की राशिस्वरूपिणी काशी में वास हेतु प्रयास करें। काशी अविनाशी सम्पूर्ण पाप राशि को नष्ट करके प्राणी को मोक्ष प्रदान करती है। काशी का स्मरण मनन वास सभी मोक्षप्रद है।।१९-२०।।

पाद्मे- **काशीं प्रतिस्थातुकामानां जनानां पापकर्मणाम्।**
घूर्णन्ते सर्वपापानि सर्वधातुगतान्यपि।।२१।।
काशीमुद्दिश्य यातानां सर्वः स्यात् समयः शुभः।
मंगलं सकलं वस्तु न किञ्चिद् हि विचारयेत्।।२२।।

काशीगमने मुहूर्त्तशकुनयोः प्रतीक्षा न कार्या इत्यर्थः।

देवाः सर्वे भवेयुर्हि प्रतिबन्धकराः परम्।
तानुपेक्ष्यैव गन्तव्या काशी मुक्तिप्रकाशिका।।२३।।

पद्मपुराण के अनुसार काशी जाते हुए सभी पापी मनुष्यों के सभी पाप शिथिल होकर चक्कर काटने लगते हैं। शरीर के समस्त धातुओं में प्रविष्ट पाप आकुलित हो जाते हैं, नष्ट प्राय होने लगते हैं। काशी यात्रा का संकल्प लेकर जाने में सभी कुछ मंगल ही मंगल है, कुछ भी विचार करने की आवश्यकता नहीं है। काशी गमन हेतु शुभाशुभ शकुन चिन्तन व्यर्थ है। सभी देवतागण यदि काशी यात्रा का विरोध करें तो उनकी भी उपेक्षा करनी चाहिए क्योंकि काशी सर्वबन्धानर्थनिवृत्तिपूर्वक मोक्ष की प्रकाशिका अत एव काशिका है।।२१-२३।।

।। इति काशीगमनमहिमा का भाषानुवाद सम्पूर्ण ।।

।। अथ काशीदर्शनमहिमा ।।

काशीखण्डे-तुलापुरुषदानेन यत्पुण्यं सम्यगाप्यते।
काशीदर्शनमात्रेण तत्पुण्यं श्रद्धयास्तु वै।।१।।
तथा- प्रयागस्नानपुण्येन यत्फलं स्याच्छिवप्रदम्।
काशीदर्शनमात्रेण तत्पुण्यं श्रद्धयास्तु वै।।२।।
तथा- श्रेयसां भाजनं चैतन्नृजन्म न मुधा नयेत्।
देवानामपि दुष्प्राप्यं काशीसन्दर्शनादृते।।३।।
कः कलिः कोऽथवा कालः किं वा कर्माण्यनेकधा।
परानन्दप्रदं क्षेत्रमविमुक्तं यदीक्षितम्।।४।।
प्रसङ्गतोऽपि यन्नेत्रपथमानन्दकाननम्।
यातं तेऽत्र न जायन्ते नेक्षेरन् पितृकाननम्।।५।।
तथा- यैर्दृष्टा दूरतः काशी ते पुण्याः पापशत्रवः।
स्पृष्टा यैस्तेऽपि च ततः श्रेष्ठाः मोक्षैकभाजनम्।।६।।

तुलापुरुषदान से जो पुण्य प्राप्त होता है, वह पुण्य श्रद्धापूर्वक काशी-दर्शन से प्राप्त हो जाता है। प्रयाग स्नान के पुण्य से जो फल शिवप्रद होता है वह भी श्रद्धापूर्वक काशीदर्शन से प्राप्त हो जाता है। अनेक कल्याणों का साधन मानव शरीर है। 'शरीरमाद्यं खलु धर्मसाधनम्।' मानव शरीर तो देवताओं के लिये भी दुर्लभ है। यदि काशी का दर्शन नहीं किया तो मानव देह ही व्यर्थ है। काशी दर्शन में ही मानवदेह की सार्थकता है। कलि क्या है? अथवा कौन काल है? और अनेक प्रकार के कर्म क्या है? अर्थात् इन सभी की स्थिति या गति परमानन्ददायक अविमुक्त क्षेत्र के तुल्य नहीं है। प्रसंगतः

अथवा संयोगवश यदि नयनों से आनन्दकानन का दर्शन हो जाय तो उनका पुनर्जन्म नहीं होता एवं उन्हें नरक का दर्शन भी नहीं होता। जिन्होंने काशी का दूर से भी दर्शन कर लिया वे पुण्यवान् और पापों के शत्रु हैं। जिन्होंने काशी का स्पष्ट रूप से स्पर्श प्राप्त कर लिया वे भी उनकी (दर्शकों) अपेक्षा श्रेष्ठ हैं। वे मोक्ष के पात्र हैं। काशी ज्ञान विज्ञान एवं अध्यात्म का अनादि केन्द्र है॥१-६॥

ब्रह्मपुराणे-**आगमिष्यन्ति ये द्रष्टुं सज्जना योजनेन तु।**
ते ब्रह्महत्यामोक्षात्तु भविष्यन्ति ममानुगाः।।७।।

मात्स्ये-**अज्ञानाज् ज्ञानतो वापि वर्त्तमानमतीतकम्।**
सर्वं तस्य च तत्पापं क्षेत्रं दृष्ट्वा विनश्यति।।८।।

पाद्मे- **अस्याः सन्दर्शनं व्यास सर्वपातकघातकम्।**
अस्यां निवासो निर्माणं साधयत्यञ्जसा मुने।।९।।

ब्रह्मवैवर्त्ते- **पश्य तात परमार्चितां पुरीम्-**
योगिभिः सुकृतिभिर्मुनीश्वरैः।।
यां निरीक्ष्य पुरुषः पुरा कृतैः
पातकैः शरमितैर्वियुज्यते।।१०।।

ब्रह्म पुराण के अनुसार-जो लोग योजनों दूर से 'काशी दर्शन' हेतु आते हैं, वे ब्रह्महत्या के महापातक से मुक्त होकर मेरे (शिव के) अनुगामी हो जाते हैं।

मत्स्य पुराण अनुसार- 'अज्ञान अथवा ज्ञान से किये गये वर्तमान एवं अतीत के सभी पाप काशी दर्शन करने वाले के तत्क्षण ही नष्ट हो जात हैं।' पद्मपुराण के अनुसार शङ्कर जी कृष्ण द्वैपायन व्यास से कहते हैं कि इस पुरी के दर्शन मात्र से सभी प्रकार के पातक नष्ट हो जाते हैं। इस पुरी में निवास निर्वाणसाधना का सरलतम साधन है।

'ब्रह्मवैवर्त्त महापुराण' के अनुसार कहा है- हे तात! बड़े बड़े योगीन्द्र मुनीन्द्र, परमहंसों द्वारा उपास्यमाना परम दिव्य पुरी काशी को देखो! जिसका निरीक्षण कर के प्राणी पूर्व में किये गये, वाणों के वेध से भी क्रूर पापों से वियुक्त हो जाते है॥७-१०॥

जन्मान्तरसहस्रैस्तु यत् पुण्यं समुपार्जितम्।

तेन पुण्यकदम्बेन दर्शनं याति काशिका।।११।।

तथा- **बहिष्कृतानि पापानि पूर्वजन्मार्जितान्यपि।**

काशीदर्शनमात्रेण नाशमेष्यन्ति नान्यथा।।१२।।

अत्र बहिष्कृतानीति निर्देशात् पूर्ववचनान्यप्येतद्विषयाण्युपसंह्रियन्ते। चतुर्धाकरणवाक्यानीवाऽऽग्नेयविषयत्वेन। अन्यथा काश्यन्तःकृतपातकपरिहारार्थं पञ्चक्रोशयात्रादि विधानवैयर्थ्यं स्यात्। तथा-

पूर्वजन्मकृतकोटिसंचितम्-

पापराशिमतुलं विनाशयेत्।

काशिका परपदप्रकाशिका।

दर्शनश्रवणकीर्त्तनादिभिः।।१३।।

'तत्रैव मनुः- **ब्रह्मन् काशीं काशिताशेषतत्त्वाम्-**

ये ये लोकाः संस्मरन्त्यत्र कुत्र।।

ते ते मुक्ताः किम्पुनर्दर्शनात्सा।

दृष्ट्वा ये वै काशिकां संगताश्च।।१४।।

।। इति काशी दर्शन-महिमा।।

हजारों जन्मों में जो पुण्य समुपार्जित किया है उन पुण्य समूहों के फलस्वरूप भगवती काशिका का दर्शन होता है। पूर्वजन्मों के काशी से बाहर किये गये समस्त पापपुञ्ज काशी का दर्शनमात्र कर लेने से ही नष्ट हो सकते हैं अन्यथा नहीं।

'त्रिस्थली सेतु' कार का कथन है कि इस वचन के अनुसार 'बहिष्कृतानि' इस निर्देश से इस विषय से सम्बद्ध सभी पूर्ववचनों का भी उपसंहार उसी प्रकार हो जाता है जिस प्रकार आग्नेयविषयक चतुर्धाकरणवाक्यों का

उपसंहार हो जाता है। अन्यथा काशी के अन्दर किये गये पापों के परिहार हेतु पञ्चक्रोश यात्रादि विधान भी व्यर्थ होने लगेगा।

भगवती 'काशिका' करोड़ों पूर्वजन्मों में सञ्चित अतुलित पाप राशिका नाश कर देती है। यह दर्शन श्रवण कीर्त्तनादि से परमपद् (मोक्ष) को भी प्रकाशित कर देती है। वही मनु का कथन है कि अशेषतत्त्वों को प्रकाशित करने वाली काशी का जो जो लोग स्मरण करते हैं उनसे मुक्ति हो जाती है। दर्शन से तो काशी शिवभाव प्रदान करती है। इस प्रकार गमन, स्मरण एवं दर्शन सभी काशी की लोकोत्तर महिमा के ज्ञापक हैं। काशी की प्राप्ति जन्मजन्मान्तरों के पुण्यों का परिपाक है।।११-१४।।

।। इति काशी दर्शन महिमा का भाषानुवाद महिमा सम्पूर्ण ।।

।। अथ काशीप्रवेशमहिमा ।।

ब्रह्मवैवर्त्ते- **महापातकयुक्तोऽपि श्रद्धया रहितोऽपि वा।**
काशी प्रवेशादनघः सम्यक् स्थित्वा सुखी भवेत्।।१।।

अत्र कश्चित् काशीप्रवेशे पापं न नश्यति किन्तु बहिरेव तिष्ठति। एतदेवानघत्वम्। अत एव लिङ्गपुराणे-

वाराणस्यां तु यः कश्चित् प्रविष्टो ब्रह्मघातकः।
तिष्ठते बाह्यतः पापं निर्गते गृह्यते पुनः।।२।।

स्कान्देऽपि- 'पञ्चक्रोशान्तरे राजन् ब्रह्महत्या न सर्पति।'

तथा पिशाचमोचनाख्याने-

प्रवेशो नास्ति चास्माकं प्रेतानां तपसां निधे।
महतां पातकानां च वाराणस्यां शिवाज्ञया।।३।।

एवमन्यान्यपि पुराणवचनानि ज्ञेयानि।

इदं तु विचारासहम्। पापस्यात्मगुणसमूर्त्तस्य च बहिरवस्थानासम्भवात्। अथ पूर्वं शरीरावच्छिन्ने स्थितमिदानीं तु व्यापकत्वादात्मनो बहिरवच्छिन्ने तस्मिँस्तिष्ठति, न तु काश्यवच्छिन्न इति मन्यसे, तन्न, अदृष्टस्य प्रदेशावच्छेदेन वृत्यभावात्। यदि च पूर्वमेव बहिरवच्छिन्न उत्पन्नं पापं न तु काश्यवच्छिन्ने तर्हि काशीप्रवेशेन किमधिकं कृतम्- अतः स्वार्थासम्भवाद् बहिः पापस्थितिप्रतिपादकवाक्यानि, 'बहिर्न गन्तव्यम्' किन्त्वत्रैव वासः कार्य इत्येवं पराणि। निर्गते गृह्यते पुनरिति च 'न हि निन्दा निन्दितुं प्रवर्त्ततेऽपितु विधेयं स्तोतुमिति न्यायेन बहिर्न यायादिति स्फुटमेवाह।'किञ्च बहुतराणि वचांसि पापविनाशमेव प्रतिपादयन्ति। तथा हि पाद्मे-

महापातकी, श्रद्धाविहीन होने पर भी काशी में प्रवेश से पाप रहित होकर सम्यक् प्रकार से काशी में स्थित रहकर सुखी होता है। यह कहा जाता है कि 'काशी प्रदेश में प्रवेश से पाप नष्ट नहीं होता, वह काशी की सीमा के बाहर विद्यमान रहता है। यही पापरहित पदार्थ है। इसीलिये लिङ्गमहापुराण में कहा है कि यदि कोई ब्रह्मघाती प्रवेश करता है तो उसका पाप काशी की सीमा के बाहर उसी प्रकार ही रहता है। काशी से बाहर जाने पर पुनः उसे पाप आक्रान्त कर लेता है।''

तथा- स्कन्द महापुराण में भी कहा है कि- ''हे राजन् पञ्चक्रोशी की मर्यादा (परिधि) के अन्दर ब्रह्म हत्या निष्प्रभावी रहती है।''

''पिशाचमोचनाख्यान में भी प्रेतों का कथन है कि हे तपोधनों!! शिव की आज्ञा है कि प्रेतों एवं महापातकों का संचरण नहीं हो सकता।'' इस प्रकार और भी दूसरे बहुत से पुराण वचन हैं। उनका भी यही आशय है।

इस पर त्रिस्थली सेतुकार का कथन है कि विचार करने पर उचित प्रतीत नहीं होता कि पहले तो पाप शरीरव्यापी रहा किन्तु अब तो आत्मा के व्यापक होने के कारण बाहर रहने पर उसमें विद्यमान रहता है न कि काशी में होने के कारण, ऐसा मानते हैं तो वह उचित नहीं है। अदृष्ट का प्रदेश में कोई प्रयोजन नहीं है। यदि पूर्व में बाहर रहने पर उत्पन्न पाप काशी में रहने पर प्रवृत्त नहीं होता, यह माने तो काशीप्रवेश में अधिक क्या हुआ? अतः स्वार्थ में अनुपपत्ति होने पर, काशी के बाहर पाप की स्थिति के प्रतिपादक वाक्यों का तात्पर्य निर्धारण भी 'काशी से बाहर नहीं जाना चाहिए' किन्तु काशी में ही रहना चाहिए, इसी अर्थ में होना चाहिए। 'निर्गते गृह्यते पुनः' यह वाक्य भी काशी से बहिर्गमन नहीं करना चाहिए, काशी में ही वास करें, इसी अर्थ में सार्थक है। काशी बहिर्गमनार्थक निन्दावाक्यों का भी स्वार्थ में तात्पर्य नहीं होकर 'काशी में ही वास करे' इसी में पर्यवसित हैं, क्योंकि 'न हि निन्दा निन्दितुं प्रवर्त्तते अपितु विधेयं स्तोतुम्' यह न्याय प्रसिद्ध है। निन्द्य की निन्दा का स्वार्थ में तात्पर्य न होकर विधेय की स्तुति में ही पर्यवसान है। बहुत से पुराणवाक्य पाप के विनाश का ही प्रतिपादन करते हैं। जैसा कि

पद्ममहापुराण में कहा है-

पद्मे- **अत्र प्रविष्टमात्रस्य जन्तोः पापं पुराऽर्जितम्।**
विनाशमाप्नोति परं पुण्यराशिश्च वर्धते।।४।।

मत्स्यपुराणे-**वाराणसीति भुवनत्रयसारभूता।**
धन्या सदा मम पुरी गिरिराजपुत्रि।।५।।
अत्रागता विविधदुष्कृतकारिणोऽपि।
पापक्षयाद् विरजसः प्रतिभान्ति मर्त्याः।।६।।

शिवपुराणे-**अविमुक्तप्रविष्टानां सद्यः पापं विलीयते।।**

पद्मपुराण के अनुसार काशी में प्रवेशमात्र करने से प्राणी का पूर्वार्जित पाप नष्ट हो जाता है तथा पुण्यराशि की वृद्धि होती है।

मत्स्य पुराण में शिवजी पार्वती से कहते है कि हे गिरिराज हिमालय की पुत्रि! यह मेरी वाराणसी पुरी सदैव धन्यतमा है। यहाँ आने वाले अनेक पाप करने वाले भी पापनाश से निर्मल होकर प्रकाशित होते हैं।

शिव पुराण के अनुसार अविमुक्त क्षेत्र में प्रवेश करने वालों के पाप तत्काल नष्ट हो जाते हैं। पद्मपुराण में कहा गया है-॥४-६॥

चत्वारो ब्राह्मणाः शस्ता एकास्त्री च पतिव्रता।।७।।

अर्थात् चार ब्राह्मण शुभ हैं तथा एक पतिव्रता स्त्री शुभ, प्रशस्त है॥७॥

सन्तप्यमानं भूरिद्युम्नं प्रति शालङ्कायनवचनम्-

काशीं गच्छ महाराज सर्वपापप्रणोदिनीम्।
तां प्राप्य सकलं पापं क्षपयिष्यसि सर्वथा।।८।।
प्रत्ययार्थं च राजेन्द्र नीलीनिचयसम्भवान्।
अनिशं कञ्चुकान् पञ्च परिधत्स्व महामते।।९।।
आ काशीदर्शनात्तां हि दृष्ट्वा स्युः चन्द्रसन्निभाः।
कञ्चुकं हि यदा नैल्यं जह्युः काशीविलोकनात्।।१०।।
तदा त्वं तत्स्वकलुषं क्षपितं वेत्सि सर्वशः।।

अपने पापों से उद्विग्न भूरिद्युम्न के प्रति शालङ्कायन का वचन है। वह राजा भूरिद्युम्न से कहता है कि महाराज! आप समस्त पापों का समूल उन्मूलन करने वाली काशी हेतु प्रस्थान करें। काशी को प्राप्त करके आप अपने समस्त पापों का शमन कर सकेंगी। विश्वास हेतु नीली के निचय से सम्भूत पाँच कञ्चुकों को आप सर्वदा धारण किये रहें। काशीदर्शन के पश्चात् उन नीलीयुक्त वस्त्रों के रंग चन्द्रमा के समान हो जाएगें। जब कञ्चुक काशी का अवलोकन करके अपनी नीलिमा को त्याग कर चन्द्रवर्ण हो जाएं तो आप अपने समस्त कलुषों को सर्वथा नष्ट समझ लेना॥८-१०॥

लैंगेऽपि- **ब्रह्महा योऽभिगच्छेत्तु अविमुक्तं कदाचन।**
तस्य क्षेत्रस्य माहात्म्याद् ब्रह्महत्या निवर्त्तते।।११।।

तथा- **ब्रह्महत्यापहं तीर्थं क्षेत्रमेतन्मया कृतम्।**

तथा- **अज्ञानात् ज्ञानतो वापि स्त्रिया वा पुरुषेण वा।।१२।।**
यत्किञ्चिदशुभं कर्म कृतं मानुषबुद्धिना।।
अविमुक्तं प्रविष्टस्य तत्सर्वं भस्मसाद् भवेत्।।१३।।

तथा- **अविमुक्तं गता ये वै महापुण्यकृतो नराः।**
अपापा ह्यजराश्चैव अदेहाश्च भवन्ति ते।।१४।।

तथा- **जन्मान्तरसहस्रेण यत्पापं पूर्वसंचितम्।**
अविमुक्तं प्रविष्टस्य तत्सर्वं व्रजति क्षयम्।।१५।।

लिंग महापुराण के अनुसार-ब्रह्म हत्यारा यदि कभी भी अविमुक्त क्षेत्र काशी में चला जाय तो उस क्षेत्र के लोकोत्तर प्रभाव से, ब्रह्महत्या सर्वथा निवृत्त हो जाती है। तथा, जाने या अनजाने मानव ने स्वभाववश अशुभ कर्म किया उसके समस्त पाप 'अविमुक्त' क्षेत्र काशी में प्रविष्ट होने मात्र से भस्म हो जाते है। तथा, जो महापुण्यवान् अविमुक्त क्षेत्र में प्रविष्ट हो जाते हैं वे निष्पाप अजर एवं विदेह (अदेह) हो जाते हैं। हजारों जन्मजन्मान्तरों के पूर्वसंचित जो भी पाप हैं वे सब अविमुक्त में मनुष्य के प्रवेश से सर्वथा नष्ट हो जाते हैं॥११-१५॥

शङ्का-समाधान

ननु एकाम्रमाहात्म्ये-

एष विश्वेश्वरो देव एषैव मणिकर्णिका।

कलावन्तर्हिता काशी मुक्तिरत्रैव लभ्यते।।१६।।

'एकाम्र माहात्म्य' में कहा है कि- 'यही विश्वेश्वर देव हैं। यही मणिकर्णिका है। कलियुग में काशी अन्तर्हित है। किन्तु यहीं मुक्ति प्राप्त होती है।'॥१६॥

इति काश्या अन्तर्धानश्रवणात् कुतस्तत्प्रवेशगमनादीति चेत् मैवम्।

इस प्रकार इस वचन में काशी का अन्तर्धान उक्त होने के कारण कैसे उस काशी में प्रवेश एवं गमन आदि उपपन्न हो सकते हैं?' किन्तु ऐसा नहीं है। क्योंकि-

अन्तर्धानं कलौ याति तत्पुरं तु महात्मनः।

अन्तर्हिते पुरे तस्मिन् पुरी तु वसते ततः।।१७।।

"कलियुग में केवल विश्वनाथ का पुर ही अन्तर्हित होता है। किन्तु पुरी तो वही होती है।"॥१७॥

इति हरिवंशे वचनात्। तथा-

यह हरिवंश में कहा है। तथा-

कलावन्तर्हितो देवस्तत्पुरं तु विशेषतः।

पुरी तु वसते नित्यं सर्वप्राणिविमुक्तिदा।।१८।।

कलियुग में देव शिव का पुर विशेषतः अन्तर्हित रहता है। किन्तु पुर के अन्तर्हित होने पर पुरी भी अवस्थित रहती हैं जो सभी प्राणियों को मुक्ति प्रदान करती है॥१८॥

इत्यादि पुराणपर्यालोचनया युगान्तरप्रत्यक्षस्य सुवर्णविविधरत्न-घटितस्य विशेषरूपस्य देवदेवनिवासस्य पुरस्य ज्योतीरूपस्य वाऽन्तर्धानात् काशी लक्षणायास्तु पुर्या मुक्त्यादिफलदाया अनन्तर्धानान्न काचिदनुपपत्तिः। एवमन्यान्यपि तत्तत्पुराणगता-

न्यन्तर्धानवचांसि नेयानि। एकाम्रप्रशंसावाक्ये तु काशीपदं पुर परमेव। यद्वा तत्क्षेत्रस्तुतिपरतया तन्न स्वार्थे तात्पर्यं भजते।

"कलियुग में देव शिव का पुर विशेषतः अन्तर्हित रहता है किन्तु पुर के अन्तर्हित होने पर भी पुरी अवस्थित रहती है जो सभी प्राणियों को मुक्ति प्रदान करती है।"

अनेकानेक पुराणों के पर्यालोचन से स्पष्ट है कि अन्य युगों में सुवर्णादि विविध रत्नमण्डित विशेषरूप से देवाधिदेव का निवास, ज्योतिरूप पुर के अन्तर्धान हो जाने पर भी काशी नाम की पुरी अन्तर्हित नहीं होती तथा मुक्ति आदि फल प्रदान करती है। पुरी स्वरूपिणी काशी के अन्तर्हित न होने के कारण कोई अनुपपत्ति नहीं है। इसी प्रकार अन्यान्य भी उन-उन पुराणों में उक्त अन्तर्धानवचनों का अभिप्राय समझना चाहिए। एकाम्रतीर्थ के प्रशंसावाक्य में प्रयुक्त काशी पद पुरपरक है जो अशेष रत्न सुवर्ण मण्डित ज्योति रूप है, वही अन्तर्हित है। किन्तु पुरी लक्षणा काशी अनन्तर्हिता तथा पुरुषार्थप्रदा है यह असन्दिग्ध है। अथवा क्षेत्र स्तुतिपरक प्रशंसा वाक्य हैं जिनका स्वार्थ में तात्पर्य नहीं है।

सनत्कुमारे- **अन्तःकृताघं न बहिर्नक्ष्यत्यप्यश्वमेधतः।**
बहिष्कृता ब्रह्महत्याऽप्यर्न्तयातस्य नश्यति।।१९।।

कौर्मे- महापातकिनो ये च ये चैभ्यः पापकृत्तमाः।
वाराणसीं समासाद्य ते यान्ति परमां गतिम्।।२०।।

तथा- **प्रविष्टमात्रे देवेशे ब्रह्महत्या कपर्दिनि।**
हा हेत्युक्त्वा सनादं सा पातालं प्राप दुःखिता।।२१।।

'जो महापातकी या उनसे भी घोर पातकी हैं उनके वाराणसी में आ जाने से उनकी भी परम गति हो जाती है।'

तथा, देवदेवेश्वर जटाजूटधारी महादेव के क्षेत्र वाराणसी में मात्र प्रविष्ट हो जाने से ब्रह्म हत्यादि जघन्यतम पाप ही हाहाकार करते हुए, चिल्लाते हुए पाताल में भाग जाते हैं। इस प्रकार महादेव ब्रह्महत्या नाश से अतिरिक्त अर्थ के दर्शन से उसका नाश भी फल के रूप में कहा गया है।"।।१९-२१।।

तथा- **मेरुमन्दरमात्रोऽपि राशिः पापस्य कर्मणः।**

अविमुक्तं समासाद्य तत्क्षणाद् व्रजति क्षयम्।।२२।।

अर्थात् मेरु एवं मन्दर के तुल्य पाप कर्मों की राशि भी अविमुक्त काशी के अन्दर प्रविष्ट होते ही नष्ट हो जाती है।।२२।।

काशीखण्डे-**काशीप्राप्तिरयं योगः काशीप्राप्तिरिदं तपः।**

काशीप्राप्तिरिदं दानं काशीप्राप्तिः शिवैकता।।२३।।

तथा- **अन्यान्यपि च पापानि महान्त्यल्पानि यानि च।**

क्षयन्ति तानि सर्वाणि काशीं प्रविशतां सताम्।।२४।।

काशीखण्ड के अनुसार- काशी की प्राप्ति ही योग है। काशीप्राप्ति ही तप है। काशीप्राप्ति ही दान है। काशीप्राप्ति ही शिवतादात्म्य अर्थात् काशी समस्त योग, तप, दान का शिवतादात्म्य रूप फल के समान है।

तथा- 'अन्यान्य स्थूल या सूक्ष्म पातक एवं महापातक सभी काशी में प्रवेश करने वालों के क्षीण हो जाते हैं।'।।२३-२४।।

मत्स्यपुराणे-**सर्वगुह्योत्तमं स्थानं मम प्रियतमं शुभम्।**

धन्याः प्रविष्टाः सुश्रोणि! मम भक्ताः द्विजातयः।।२५।।

तथा- **अविमुक्ताः शुभं प्राप्य मद्भक्ताः कृतनिश्चयाः।**

निर्धूतपापाविमला भवन्ति विगतक्लमाः।।२६।।

मस्त्यपुराण के अनुसार मेरा परम प्रिय स्थान अत्यन्त रहस्यमय, परम-गुप्त एवं सर्वकल्याणकारी है। हे सुश्रोणि!! मेरे भक्त, भाग्यशाली द्विज जो इस (काशी) में प्रविष्ट हैं, तथा मेरे सत्संकल्प भक्त परमशुभ अविमुक्त स्थान को प्राप्त करके सभी कष्टों से ऊपर उठकर निर्धूतपाप अतएव मलरहित हो जाते हैं, काशी प्रवेश में शुभाशुभ काल का भी विचार नहीं करना चाहिए। इसीलिये काशी खण्ड में कहा है-।।२५-२६।

अथ वा काशीसम्प्राप्तौ न चिन्त्यं हि शुभाशुभम्।

तदैव हि शुभः कालो यदैवाप्येति काशिका।।२७।।

अथवा काशी प्राप्ति में शुभाशुभकाल की चिन्ता नहीं करनी चाहिए। काशी प्राप्त हो जाय वही शुभ काल है।।२७।

लिङ्गं दशाश्वमेधीशं (यं) दृष्ट्वा दशहरा तिथौ।
दश जन्मार्जितैः पापैस्त्यज्यते नात्र संशयः।।२८।।

इत्यादि वचन असंगत हो जाएँगे। इसी प्रकार-

'दशाश्वमेधे ज्येष्ठशुक्लप्रतिपदादिदशम्यन्तस्नाने क्रमेणैक-द्वयादिजन्मनाशप्रतिपादकानि चानुपपन्नानि वचनानि स्युः क्षेत्रप्रवेशा-देवाशेषपापक्षयात्। अतः प्रवेशादेतज्जन्मार्जितमेव पापं नश्यति। तत्तत्तीर्थस्नानादिना तु प्राग्जन्मीयपापक्षयः। एवं तु जन्मान्तरसहस्त्रेणेति प्रागुदाहृतैः प्रवेशादनेकजन्मपापनाशप्रतिपादकवचनैर्विरोधाशतात् तत्तत्तीर्थ स्नानादिना पापादिशब्दलक्षिता पापवासनाऽनेकजन्मीया नश्यति, प्रवेशात् तु अखिलपापनाश एव।'

'न च ततो वासनापि नश्यतीति वाच्यम्। तथा सति काशीप्रविष्टानां वासनाभावात् पापे प्रवृत्यभावापत्तेस्तस्याः प्रवेशनिर्वर्त्यत्वात् कारणान्तरादेव निवृत्तेः। तदुक्तं ब्रह्मवैवर्त्ते-

पूर्वजन्मसहस्त्रै परिस्वनुभूतः कविर्बहिः।
तद्वासना हृद्गताऽत्र कथं याति महर्षयः।।

अतः प्रवेशादखिलजन्मीयपापनाशः। तत्तत्तीर्थस्नानादिभिस्तु तत्तज्जन्मीयपापवासना निवृत्तिरेवेत्यन्ये।

'दशाश्वमेध में ज्येष्ठ शुक्ल प्रतिपदा से दशमी पर्यन्त स्नान से क्रम से एक दो आदि जन्मों के पापनाशक वचन अनुपपन्न हो जाते हैं। क्योंकि काशी क्षेत्र में प्रवेश मात्र से ही जन्मान्तरीय समस्त पापों का क्षय हो जाएगा अत एव यहीं मानना उचित है कि-''प्रवेश से वर्त्तमान जन्म के ही पापों का नाश होता हैं तत् तत् तीर्थों में स्नानों के सम्पादन से पूर्वपूर्व जन्मों के पापों का क्षय होता हैं।''

इस प्रकार 'जन्मान्तर सहस्त्रेण' इत्यादि पूर्वोदाहृत वचनों से 'प्रवेश से

ही अनेक जन्मार्जितपापनाशक वचनों का विरोध उपस्थित हो जाएगा। अतः तत्तत्तीर्थों में स्नानों से पापादि शब्दों से लिप्त अनेक जन्मीय पापवासना समाप्त होती है। प्रवेश से तो समस्त पापों का नाश होता है।' यही मानना उचित है।

'यह भी कहना अनुचित है कि पापवासना भी नष्ट होगी। क्योंकि काशी में प्रविष्ट प्राणियों में वासना न होने के कारण पाप में प्रवृत्ति ही नहीं होगी। अतः पाप में प्रवृत्त्यभाव के कारण पाप में प्रवृत्ति काशी में प्रवेश से अर्निवत्य होने से कारणान्तर से ही पापप्रवृत्ति का नाश सम्भव होगा। ब्रह्मवैवर्तपुराण में कहा गया है कि- पूर्व के हजारों जन्मों से जो पापों (कलि) का अनुभव हुआ है वह काशी के बाहर का है। अतः उस पाप की वासना अन्तःकरण में रहती है। उसका नाश कैसे सम्भव होगा। इससे यही निश्चित होता है कि 'काशी प्रवेश से ही समस्त पापों का नाश होता है। पापवासना की निवृत्ति तो तत्तत्तीर्थों में स्नानों से ही होती हैं ऐसा अन्यान्य महर्षियों का भी विचार है।

अपरे त्वेवं सति पापादिशब्देषु वासनालक्षणापत्तिर्दोषो वासनानाशे च पुनः काशीस्थानां पापे प्रवृत्त्यनुपपत्तिः। न च ततः प्राचीनजन्मानुवृत्तवासनातस्तदुपपत्तिः। कृत्तिवासविश्वेश्वरादि-दर्शनेनाशेषपापक्षयप्रतिपादनात्तत्राशेषवासना निवृत्तिपरत्वे पापप्रवृत्त्यनुपपत्तेर्दुष्परिहरत्वात्। अतः प्रवेशादशेषमेव पापं नश्यति। काशीस्थतत्तत्तीर्थस्नानतत्तल्लिङ्गदर्शनादिना त्वेकद्वयादिजन्मीयपाप-निवृत्तिर्ये देशान्तरमृताः पुण्यातिशयेन काश्यामुत्पन्नास्तद्विषयतयाऽ-प्युपपन्नेति न काचिदनुपपत्तिः। ननु तेषामपि लिङ्गशरीरस्य काशी-प्रवेशादखिलं पापं नष्टमेव। मैवम्। षाष्ठतिर्यगधिकरणन्यायेन-

यतो विधिनिषेधेषु मनुष्याणामधिक्रिया।
अतः पशुपिशाचाद्या धर्माधर्मोखरा मताः।।

इतिपद्मपुराणाच्च मनुष्याधिकारित्वाच्छास्त्रस्य लिङ्गशरीरे पापनाशासंभवात्। न हि ज्वलनस्य दाहकत्वमिव काशी-संबन्धमात्रस्य पापनाशकता किंत्वधिकारिकृततथाविधिसम्बन्धस्य। अन्यथाऽङ्गविधिवैयर्थ्यापातात्। न च लिङ्गशरीरस्य काशी-

संबन्धस्तथा। यत्तु पिशाचमोचनाख्याने पिशाचस्यापि तत्र स्नानात्पैशाच्यनिवृत्तिप्रतिपादनं तत्स्तुत्यर्थतया न स्वार्थे प्रमाणम्। यद्वा निषादस्थपतीष्टिवद्यावद्वचनं वाचनिकमिति न्यायेन तन्मात्रविषयमेव। लिङ्गदेहस्य तु काशीप्रवेशात्पापनिवृत्तौ न वचनमस्ति। अतः काश्युत्पन्नविषयाणि तत्तत्तीर्थस्नानादेकद्वयादि-जन्मीयपापनाशवचनानीति। यत्तु 'तत्र ब्रह्मेश्वरं दृष्ट्वा ब्रह्मलोके महीयते' इत्यादि। ब्रह्मलोकेन्द्रलोकादिफलं यच्च क्वचिन्मुक्त्यादि-फलं श्रुतं तदपि यात्रां कृत्वा देशान्तरमृतविषयम्। नन्वेवं काशीप्रवेशात्प्रवेशावधिकृतसकलपापनाशे कृतकाशीयात्रस्या-कृतकाशीपातकस्य काशीतो निर्गमनसमनन्तरमेव मरणेऽनन्त-स्वर्गापत्तिः केवलपुण्येन पुनः संसारासंभवात्। न च पुण्यान्तं यावत्स्वर्गभोगोऽनन्तरं मोक्ष एव तस्येति युक्तं श्रवणादि-जन्यात्मज्ञानाभावे तदनुपपत्तेरिति चेन्न। तस्यापि पापसंभवात्। अस्वास्थ्यादिना मरणे नित्यादिलोपजलप्रत्यवायापत्तेः। चोरादिभिर्हनने तु दुर्मरणजपापापत्तेः। अन्ते दुष्टमतिसंभवेनान्ते मतिः सा गतिरिति वचनादनेकयोन्यापत्तेश्च। अतः काशीप्रवेशादखिलपापनाशेऽपि न काचिदनुपपत्तिः। ऋजवस्तु स्मरणगमनदर्शनप्रवेशतत्ततीर्थ-स्नानादीनां नियतक्रमाणां फलावैलक्षण्य उत्तरोत्तरार्थक्यापातात्प्रत्येकं च सर्वपापक्षयश्रवणात्क्षये च स्वतो वैलक्षण्याभावेऽपि कायिकवाचिकमानसिकबुद्धिपूर्वसकृदावृत्तात्यन्तावृत्त-महापातकोपपातकादिप्रतियोगिकृतवैलक्षण्यसंभवात्पापे च सर्वत्वस्यावान्तरवैजात्यावच्छेदेनैव संकुचद्वृत्त्या सर्वेभ्यो ज्योतिष्टोमः, सर्वेभ्यो दर्शपूर्णमासौ, सर्वेभ्यश्चातुर्मास्यानीतिवत्संभवाद्गमनादौ प्रत्येकं सर्वपापनाशेऽपि न काचिदनुपपत्तिः। तथा च प्रवेशाद्यज्जातीयं सर्वं पापं नष्टं तद्विजातीयमेवैकद्वयादिजन्मीयं तत्तत्तीर्थस्नानान्नश्यती-त्याहुः। अत्र परीक्षकैर्विचार्य युक्तः पक्षो ग्राह्यः।

कतिपय विज्ञजनों के अनुसार, ऐसी स्थिति में पाप आदि शब्द की वासना में लक्षणा मानने पर दोष होगा। वासना का नाश होने पर भी काशी निवासियों की पाप में प्रवृत्ति अनुपन्न होगी। यह भी नहीं कह सकते है कि- 'तब पूर्व-पूर्व जन्मों से अनुवृत्त वासना से प्रवृत्ति उपपन्न हो सकेगी। कृत्तिवास विश्वेश्वर आदि शिवलिङ्गों के दर्शनों से समस्त पापों के नाश का प्रतिपादन होने पर अशेषवासनानिवृत्तिपरक होने पर पापप्रवृत्ति की अनुपपत्ति का परिहार कठिन हो जायेगा। अत: 'काशी प्रवेश से समस्त पाप नष्ट हो जाता है, काशी में विद्यमान उन-उन तीर्थों में स्नान तथा उन-उन तीर्थों में विद्यमान लिङ्गों के दर्शनों से एक दो आदि जन्मों की पापनिवृत्ति होती है। यही शास्त्रीय निर्णय है। जो प्राणी दूसरे देश में मर गये और अतिशय पुण्य के प्रभाव से काशी में उत्पन्न हो गये, उनके विषय में उक्त वचन उपपन्न हो जाएंगे। अत: किसी भी प्रकार की अनुपपत्ति नहीं है।

यदि कहें कि 'तब उनके सूक्ष्म शरीर के समस्त पाप काशी में प्रवेश से नष्ट ही हो गये' तो यह भी ठीक नहीं है। 'षाष्ठतिर्यगधिकरण के अधो निर्दिष्ट न्याय तथा पद्मपुराण के वचनानुसार विधि एवं निषेधों में केवल मनुष्य ही अधिकृत हैं। शास्त्र मानव में ही चरितार्थ होते हैं। लिङ्ग शरीर एवं पाप नाश सम्भव नहीं है। अग्नि के दाहकत्व की तरह 'काशी सम्बन्ध मात्र से पापनाशकता नहीं हो सकती। अधिकारी कृत विधि के अनुसार 'काशीसम्बन्ध' होगा तभी पापनाशकता होगी। अन्यथा अंग विधियाँ व्यर्थ हो जायेंगी। लिङ्ग शरीर का सम्बन्ध काशी से वैसा है नहीं। पिशाचमोचनाख्यान में पिशाच की भी उस तीर्थ में स्नान से पिशाच योनि से मुक्ति का प्रतिपादन 'अर्थवाद' है। अर्थवादों का स्वार्थ में तात्पर्य नहीं होता अथवा 'निषादस्थपति इष्टि' की तरह, 'जितना वचन उतना कथन है' इस न्याय से उतने ही अंश में वह चरितार्थ है। लिङ्गदेह के काशी प्रवेश से पाप निवृत्ति में कोई वचन नहीं है। अत: जो काशी में उत्पन्न हैं उनके विषय में ही उन-उन तीर्थ स्नानों से एक दो आदि जन्म के पापनाश के सम्बन्ध में ही हैं।

'तत्र ब्रह्मेश्वरं दृष्ट्वा ब्रह्मलोके महीयते' इत्यादि से स्मृत ब्रह्मलोक, इन्द्रलोक आदि की प्राप्ति का फल भी काशी यात्रा के पश्चात् अन्य देशों में मरने वालों के विषय में ही उपयुक्त है। यदि यह कहें कि काशीप्रवेश से प्रवेशावधि तक

किये गये सम्पूर्ण पापों के नष्ट होने पर काशी की यात्रा कर चुके किन्तु काशी में मरे नहीं और काशी से निर्गमन के पश्चात् मरने पर अनन्त स्वर्ग की प्राप्ति हुई। किन्तु केवल पुण्य से पुनः संसार की प्राप्ति असम्भव है, पुण्यक्षय पर्यन्त स्वर्गभोग एवं तत्पश्चात् मोक्ष कथन भी युक्त नहीं है। **श्रवण मननादिजन्य-आत्म ज्ञान के अभाव में मोक्षाप्राप्ति असम्भव है।** वहाँ भी पाप सम्भव है। बीमारी आदि के कारण मृत्यु से नित्य आदि कर्मलोप से प्रत्यवाय हो गया। चोरों एवं हत्यारों द्वारा हत्या से दुर्मरणजन्य पाप भी सम्भव है। अन्तकाल में दुष्टमति के सम्भव होने से 'अन्ते मतिः सा गतिः' इस न्याय से अनेक योनि भ्रमण भी हो ही सकता है। इस प्रकार काशी प्रवेश से अखिल पाप नाश मानने में भी कोई हानि नहीं है।

सरलमति के विचारक तो स्मरण-गमन-दर्शन-प्रवेश-तत्तत्तीर्थ स्नानादि निश्चित क्रम वालों में फलों की विलक्षणता के अभाव में उत्तरोत्तर आनर्थक्य की प्रसक्ति होने के कारण ऐकैकशः सभी पापों का क्षय सम्भव है। पाप क्षय में स्वतः विलक्षणता का अभाव होने पर भी कायिक, वाचिक, मानसिक, बुद्धिपूर्वक या अबुद्धिपूर्वक सकृत् या असकृत् आवृत्त या अत्यन्त आवृत्त महापातक उपपातक आदि प्रतियोगी कृत वैलक्षण्य सम्भव होने पर पाप के सर्वत्व में अवान्तर वैजात्य से ही संकोचीय रीति सभी के लिये ज्योतिष्टोम, सभी को दर्शपौर्णमास, सभी के लिये चातुर्मास्य, आदि की तरह सम्भव होने पर काशी गमनादि से सर्वपाप नाश मानने पर भी कोई हानि नहीं है। काशी प्रवेश से जिस जातीय सर्व पापों का नाश हुआ उससे विजातीय एक दो तीन आदि जन्मों के पाप उन उन तीर्थों के स्नान से नष्ट होते हैं। ऐसा कहते है। अतः विचारशीलों को चाहिए कि विवेकपूर्वक युक्त पक्ष को स्वीकार करें।

।। नारायण भट्टविरचित त्रिस्थली सेतु में 'काशी प्रवेश विचार' नामक भाग का भाषानुवाद सम्पूर्ण हुआ ।।

।। अथ काश्यादिक्षेत्रपरिमाणम् ।।

तत्र पाद्मे पातालखण्डे-

परिमाणं च वक्ष्यामि तन्निबोधत सत्तमाः।
मध्यमेश्वरमारभ्य यावद्देहलिविघ्नपम्।।१।।
सूत्रं संस्थाप्य तद्दिक्षु भ्रामयेन्मण्डलाकृति।
तत्र या जायते रेखा तन्मध्ये क्षेत्रमुत्तमम्।।२।।
काशीति यद्विदुर्वेदास्तत्र मुक्तिः प्रतिष्ठिता।
काश्यन्तः परमं क्षेत्रं विशेषफलसाधनम्।।३।।
वाराणसीति विख्यातं तन्मानं निगदामि वः।
दक्षिणोत्तरयोर्नद्यौ वरणाऽसिश्च पूर्वतः।।४।।
जाह्नवी पश्चिमे चापि पाशपाणिर्गणेश्वरः।
तस्या अन्तःस्थितं दिव्यं विशेषफलसाधनम्।।५।।
अविमुक्तमिति ख्यातं तन्मानं च ब्रवीमि वः।
विश्वेश्वराच्चतुर्दिक्षु धनुःशतयुगोन्मितम्।
अविमुक्ताभिधं क्षेत्रं मुक्तिस्तत्र न संशयः।।६।।
गोकर्णेशः पश्चिमे पूर्वतश्च गङ्गा मध्यमुत्तरे भारभूतः।
ब्रह्मेशानो दक्षिणे संप्रदिष्ट स्तत्तु प्रोक्तं भवनं विश्वभर्तुः।।७।।

व्यास महर्षियों से कहते हैं कि मैं अब काशी क्षेत्र का परिमाण कह रहा हूँ। आप सुनें। मध्यमेश्वर से प्रारम्भ करके देहलीविनायक पर्यन्त सूत्र संस्थापित करने से जो रेखा बनती है उसके मध्य में उत्तम क्षेत्र है। वही काशी है ऐसा विद्वानों का मत है। उसमें मुक्ति प्रतिष्ठित है। काशी के मध्य में यह श्रेष्ठ क्षेत्र है। यह विशेष फल का साधन है। अब मैं विख्यात

वाराणसी का परिमाण कह रहा हूँ। दक्षिण एवं उत्तर दोनों ओर वरणा और असी नदी है। पूर्व में जाह्नवी (गंगा) तथा पश्चिम में 'पाशपाणि' (दण्डपाणि) नामक रुद्र गणेश्वर है। इसके मध्य में विशेष फलदायक क्षेत्र है। अविमुक्त नामक क्षेत्र का परिमाण यह है कि विश्वेश्वर से चारो तरफ दो सौ धनुष पर्यन्त 'अविमुक्त' क्षेत्र है। यहाँ मुक्ति निश्चित है। पश्चिम में गोकर्णेश, उत्तर में भारभूत, ब्रह्म और दक्षिण में 'ईशान' हैं। इनके मध्य में विश्वभर्त्ता विश्वेश्वर का भवन है।।१-७।।

विश्वभर्त्तुर्भवनमन्तर्गृहम्। ततश्च काशीवाराणस्यविमुक्तान्तर्गृहाख्यानां चतुर्णां क्षेत्राणामुत्तरोत्तरँ पूर्वपूर्वान्तर्वर्ति पूर्वपूर्वापेक्षया न्यूनपरिमाणं चेति सम्पिण्डितार्थः।

त्रिस्थलीसेतुकार ने सारांश में कहा है कि काशी, वाराणसी, अविमुक्त व अन्तर्गृह चारों क्षेत्र पूर्व पूर्वान्तर्वर्त्ती, पूर्व पूर्व की अपेक्षा अल्पपरिमाण हैं। यहीं संक्षिप्तार्थ है।

ब्रह्मपुराणे रुद्रं प्रति ब्रह्मा काशीक्षेत्रमाह-

पञ्चक्रोशप्रमाणं तु क्षेत्रं दत्तं मया तव।
क्षेत्रमध्ये यदा गङ्गा गमिष्यति सरित्पतिम्।।८।।
तेन सा महती पुण्या पुरी रुद्र भविष्यति।
पुण्या चोदङ्मुखी गङ्गा प्राची चापि सरस्वती।।९।।
उदङ्मुखी योजने द्वे गच्छते जाह्नवी नदी।

मध्यमेश्वरात्सर्वदिक्षु पञ्चकोशप्रमाणमित्यर्थः। यत्तु ब्रह्मवैवर्ते कामकलावचः-

अर्थात् ब्रह्मा ने रुद्र से कहा कि पाँच कोश का क्षेत्र मैंने आपको दिया है। इस क्षेत्र के मध्य से जब गंगा समुद्र की ओर प्रस्थान करेंगी तो यह पुरी (काशी) अत्यन्त पवित्र एवं महिमावती हो जाएगी। पवित्र उत्तरवाहिनी गंगा 'प्राची सरस्वती' दोनों ही नदियाँ दो कोस तक साथ जाएँगी।।८-९।।

'त्रिस्थलीसेतु' कार के अनुसार मध्यमेश्वर के चारों ओर पाँच क्रोश प्रमाण' शब्दार्थ है। जो कि 'ब्रह्मवैवर्त्त' में कामकला का वचन है-

अहो महालिङ्गमयं जनार्दन!
पश्यामि काश्यां परमात्मरूपम्।
आनाहतो योजनपञ्चकात्मकं
विस्तारि गव्यूतियुगं तु सार्धम्।।१०।।

'अत्र योजनं क्रोशस्तेन समन्ततः पञ्चक्रोशता' ही है। अतः कोई विरोध नहीं हैं। वाराणसी क्षेत्र तो 'वरणा' एवं असी का अन्तर्वर्त्ती है। यही कूर्म पुराण में कहा भी है-॥१०॥

वरणायास्तथैवास्या मध्ये वाराणसी पुरी।
मात्स्ये-**द्वियोजनमथार्धं च पूर्वपश्चिमतः स्थितम्।**
अर्धयोजनविस्तीर्णं दक्षिणोत्तरतः स्थितम्।।११।।
वरणा च नदी यावद्यावच्छुष्कनदी तथा।
एष क्षेत्रस्य विस्तारः प्रोक्तो देवेन धीमता।।१२।।

अर्थात् - अढ़ाई योजन पूर्व एवं पश्चिम तथा आधा योजन दक्षिणोत्तर स्थित वरणा और शुष्क नदी (असी) के मध्य इस क्षेत्र का विस्तार है। यहाँ पूर्वार्ध में काशी का ही विस्तार है। वाराणसी का नहीं। उसके पूर्व में जाह्नवी (गंगा) यह पद्मपुराण में पूर्व की सीमा निर्धारित की गयी है। सनत्कुमार संहिता में कहा गया है-॥११-१२॥

क्षेत्रस्य सन्दर्श्य च पूर्ववेलां पृष्ठेन गंगा प्रवहत्यजस्त्रम्।

अर्थात् - क्षेत्र की पूर्व सीमा का दर्शन कराती पृष्ठ भाग में गंगा निरन्तर बहती रहती है। अतः क्रोशपरिमित काशी क्षेत्र में गंगा के मध्य में विभक्त मानकर पूर्वार्ध का परित्याग कर के पश्चिमार्ध में गंगा असी-देहली विनायक-वरणा से चारों तरफ घिरा हुआ क्षेत्र वाराणसी सिद्ध होता है।

तथा मात्स्य एव-

द्वियोजनं तु विस्तीर्णं पूर्वपश्चिमतः स्मृतम्।
अर्धयोजनविस्तीर्णं तत्क्षेत्रं दक्षिणोत्तरम्।।१३।।
वरणा च नदी यावद्यावच्छुष्कनदी तु वै।
भीमचण्डीं समारभ्य पर्वतेश्वरमन्तिके।।१४।।

दो योजन पूर्व पश्चिम तक विस्तीर्ण तथा दक्षिण एवं उत्तर आधा योजन विस्तीर्ण, वरणा एवं असी तक भीमचण्डी से लेकर पर्वतेश्वर के समीप तक वाराणसी है।

यह भी पूर्व पुराणसन्दर्भों के अनुसार ही कहां गया है। यहाँ 'द्वियोजनम्' पद अतिसामीप्यकृत व्यवधान से स्थूलपरिमाण के अभिप्राय से 'अढ़ाई योजन' परक ही है। पद्मपुराण के सृष्टि खण्ड में कहा गया है कि-।।१३-१४।

वरणा चाप्यसिश्चैव द्वे नद्यौ सुरनिर्मिते।
अन्तराले तयोः क्षेत्रं बध्या न विशते क्वचित्।।१५।।

वरणा और असि इन दोनों देवनिर्मित नदियों के अन्तराल क्षेत्र में बध्या (हत्या) का प्रवेश नहीं होता।।१५।।

लिङ्ग पुराणे-

कृत्तिवासं समारभ्य कोशं क्रोशं चतुर्दिशम्।
योजनं चैव तत्क्षेत्रं गणै रुद्रैश्च संवृतम्।।१६।।

तथा- **क्षेत्र मध्ये यदा लिङ्गं भूमिं भित्त्वा समुत्त्थितम्।**
मध्यमेश्वरसंज्ञं तु ख्यातं सर्वसुरासुरैः।।१७।।
अस्मादारभ्य लिङ्गात्तु क्रोशं क्रोशं चतुर्ष्वपि।
योजनं विद्धि तत्क्षेत्रं मृत्युकालेऽमृतप्रदम्।।१८।।
एष क्षेत्रस्य विस्तारः पुराणपरिकीर्त्तितः।
अस्मात्तु परतो देवि विहारो नैव विद्यते।।१९।।

स्कन्दे- **चतुष्क्रोशं चतुर्दिक्षु क्षेत्रमेतत् प्रकीर्त्तितम्।**
योजनं विद्धि चार्वंगि मृत्युकालेऽमृतप्रदम्।।२०।।

तथा- **मुक्तिक्षेत्रप्रमाणं च क्रोशं क्रोशं च सर्वतः।**
प्रारभ्य लिङ्गादस्माच्च पुण्यदान्मध्यमेश्वरात्।।२१।।

काशीक्षेत्र के मध्य भूमि का भेदन करके जो शिवलिङ्ग प्रकट हुआ वह देवों असुरों में मध्यमेश्वर नाम से विख्यात हुआ। इस लिङ्ग से आरम्भ करके चारों ओर क्रोश क्रोश पर्यन्त (योजन) परिमाणात्मक यह

क्षेत्र मृत्युकाल में मोक्षप्रद है। पुराण में इस क्षेत्र का यही विस्तार है। इससे बाहर मेरा विहार नहीं है। यह शिव का पार्वती से कथन है।

"स्कन्द-पुराण के अनुसार चारों दिशाओं में चार क्रोश पर्यन्त का (योजन) क्षेत्र अन्तकाल में मुक्तिप्रद है। इस मध्यमेश्वर लिङ्ग से आरम्भ करके क्रोश-क्रोश पर्यन्त चारों ओर का परिमित क्षेत्र मुक्ति क्षेत्र है।"

त्रिस्थलीसेतुकार के कथनानुसार लिङ्ग एवं स्कन्द पुराण के वचनानुसार पर्यालोचन से स्पष्ट है कि कृत्तिवासेश्वर एवं मध्यमेश्वर लिङ्गों के चारों ओर योजन पर्यन्त 'अविमुक्त' क्षेत्र है। पद्मपुराण के अनुसार विश्वेश्वर से चारों तरफ दो सौ धनुष पर्यन्त यह क्षेत्र है। यहाँ परिमाण का विकल्प है। 'योजन' पद का अर्थ है कि उपयुक्त तीनों वचनों में प्रथम कहे गये अविमुक्त क्रोश के साथ योजन के पांच क्रोशात्मक होने से काशीपरिमाण परक है। अत: कोई भी असंगति नहीं है। कृत्तिवासेश्वर का मध्यमेश्वर के समीप होने के कारण स्वल्प अन्तर दोषावह नहीं है।।१६-२१।।

अन्तर्गृहपरिच्छेदश्च काशी खण्डे-

पूर्वतो मणिकर्णीशो ब्रह्मेशो दक्षिणे स्थितः।
पश्चिमे चैव गोकर्णो भारभूतस्तथोत्तरे।।२२।।
इत्येतदुत्तमं क्षेत्रमविमुक्तं महाफलम्।

पूर्व में मणिकर्णेश्वर, दक्षिण में ब्रह्मेश, पश्चिम में गोकर्ण तथा उत्तर में भारभूतेश्वर, परिधि में अविमुक्त के अन्दर महाफलप्रद अन्तर्गृही क्षेत्र है।

त्रिस्थलीसेतुकार के कथनानुसार अविमुक्त पद तन्मध्यपरक है। यहाँ पूर्व में मणिकर्णिकेश्वर की सीमोक्ति होने पर भी पद्ममहापुराण की एकवाक्यता होने से गंगा का मध्य भाग ही उपलक्षित होता है। इसलिये गंगा के आधे जल में मृत प्राणी की चारों क्षेत्रों में मुक्ति सिद्ध होती है। अन्य व्याख्याकार विकल्प मानते हैं। इन सभी का निम्न संक्षेप है-।।२२।

सीमाविनायकेभ्यश्च बहिः काश्याः प्रमाणतः।
तावत् क्षेत्रँ विजानीयात् यावद् धनुःशतत्रयम्।।२३।।

इस वचन के अनुसार भीमचण्डी के पश्चात् तीन सौ धनुष पर्यन्त का क्षेत्र

पूर्व से गंगापार के साथ वर्तुलाकार काशी क्षेत्र है। गंगा तो इसी क्षेत्र के मध्य बहती है। 'क्षेत्र मध्याद यदा गंगा' यह वचन पूर्व में उक्त है। गंगा-असी-भीमचण्डी पाशपाणि वरणा का मध्यवर्त्ती क्षेत्र वाराणसी है।।२३।।

ब्रह्मवैवर्त्तपुराण के अनुसार-

काश्याश्चतुर्दिशं देवि योजनं स्वर्गभूमिका।
मृतास्तत्र हि गच्छन्ति स्वर्ग सुकृतिनां पदम्।।२४।।

अर्थ-ऊपर आ गया है। वामनपुराण में भगवान् विष्णु ने महादेव से 'अन्यक्षेत्र' भी कहा है-।।२४।।

योऽसौ प्राङ्मण्डले पुण्ये मदंशप्रभवोऽव्ययः।
प्रयागे वसते नित्यं योगशायीति विश्रुतः।।२५।।
चरणाद्दक्षिणात्तस्य विनिर्याता सरिद्वरा।
विश्रुता वरणेत्येव सर्वपापहरा शुभा।।२६।।
सव्यादन्या द्वितीया च असिरित्येव विश्रुता।
ते उभे सरितां श्रेष्ठे लोकपूज्ये बभूवतुः।।२७।।
तयोर्मध्ये तु यो देशस्तत्क्षेत्रं योगशायिनः।
त्रैलोक्यप्रवरं तीर्थं सर्वपापप्रमोचनम्।।२८।।
न तादृशोऽस्ति गगने भूम्यां न च रसातले।
तत्रास्ति नगरी पुण्या ख्याता वाराणसी शुभा।।२९।।
यस्यां हि भोगिनो नाशे प्रयान्ति भवतो लयम्।

यह जो परम पवित्र, पूर्व मण्डल में पुण्य क्षेत्र प्रयाग में नित्य वास करने वाले प्रसिद्ध योगशायी है। उनके दक्षिण चरण से विश्वप्रसिद्ध वरणा नाम की सर्वपापप्रणाशिनी नदी प्रादुर्भूत हुई है। वामपाद से दूसरी असी नाम से प्रसिद्ध है। ये दोनों नदियाँ लोक में पूज्य हो गयीं। इन दोनों के मध्य में 'योगशायी' भगवान् का जो क्षेत्र है वह सभी पापों से मुक्ति प्रदान करने वाला त्रैलोक्यश्रेष्ठ तीर्थ है। भूमि, आकाश और पाताल में कहीं भी

उस की समानता किसी अन्य क्षेत्र से नहीं की जा सकती है। उसी क्षेत्र में वाराणसी परम पवित्र तीर्थ विख्यात है। जिस में भोगासक्त प्राणी भी मृत्यु के पश्चात् आपके परम पद को प्राप्त कर लेते हैं। अभिप्राय यह है कि काशी के बाहर चतुर्दिक् एक योजन (पांच क्रोश) तक का क्षेत्र स्वर्ग क्षेत्र है जहाँ मरने वाले स्वर्ग प्राप्त करते हैं। अर्थात् 'मध्यमेश्वर' से चतुर्दिक पाँच क्रोश तक का क्षेत्र अविमुक्त क्षेत्र है। जहाँ शरीर छूटने पर मोक्ष प्राप्त होता है तथा काशी की सीमा से चतुर्दिक् स्वर्ग क्षेत्र है (देवभूमि) जहाँ शरीर त्याग से स्वर्ग प्राप्त होता है। अपवर्ग अपुनर्भव है तथा स्वर्ग, देवलोक तुल्य है॥२५-२९॥

।। इति भट्टनारायण विरचित त्रिस्थली सेतु का क्षेत्रपरिमाण भाषानुवाद व्याख्या पूर्ण ।।

।। अथ कियत् कालं काशीवासफलम् ।।

स्कान्दे- तीर्थान्तरे गवां कोटिं विधिवद्यः प्रयच्छति।
एकाहं यो वसेत्काश्यां काशीवासी तयोर्वरः।।१।।

तथा- अहोरात्रं स्थित्वा भवति सुकृती पापरहित-
स्त्रिरात्रं यस्तिष्ठेत्स खलु सुखमोक्षैकनिलयः।
निवासं ये कुर्युर्विततमधिकारानुगुणितं
न ते धर्मात्मानः पुनरपि भवभ्रान्तिषु जुषः।।२।।
त्रिरात्रमपि ये काश्यां वसन्ति नियतेन्द्रियाः।
तेषां पुनन्ति नियतं स्पृष्टाश्चरणरेणवः।।३।।

तथा- यत्पुण्यमश्वमेधेन यत्पुण्यं राजसूयतः।
काश्यां तत्पुण्यमाप्नोति त्रिरात्रवसनाद्यमी।।४।।

मात्स्ये- मासमेकं वसेद्यस्तु लघ्वाहारो जितेन्द्रियः।
सम्यक्तेन व्रतं चीर्णं दिव्यं पाशुपतं महत्।।५।।
जन्ममृत्युभयं तीर्त्वा स याति परमां गतिम्।

स्कन्द महापुराणके अनुसार जो दूसरे तीर्थों में करोड़ों गायों का दान करता है उसकी अपेक्षा एक दिन काशी में वास करता है वह श्रेष्ठ है।

तथा, "अहोरात्र पर्यन्त काशीवासी पापरहित एवं सत्कर्मा होता है। त्रिरात्र पर्यन्त काशीवासी ऐहिक-आमुषिक आनन्द का अधिकारी हो जाता है। जो लोग अधिक कालपर्यन्त अधिकार के अनुगुण काशी में निवास करते है वे धर्मात्मा पुनः भवभ्रान्तियों से अनाक्रान्त रहते हैं।

तीनरात्रि पर्यन्त जो संयतेन्द्रिय होकर काशीवास कर लेते हैं, उनके पादरेणु भी स्पर्श करने वालों को पवित्र कर देते हैं। उनके पाद के स्पर्श से पवित्र भूमि कण जिन पर पड़ जाते हैं वे धन्य हो जाते हैं।

तथा- "जो पुण्य अश्वमेघ याग के अनुष्ठान से होता है तथा जो पुण्य राजसूय यज्ञ से होता है वह काशी में तीन रात्रि निवास मात्र से प्राप्त हो जाता है।"

"मत्स्य महापुराण के अनुसार एक मास तक जो अल्पाहार एवं इन्द्रिय संयम पूर्वक वास कर लेता है, उसने मानो दिव्य एवं श्रेष्ठ पाशुपत का अनुष्ठान पूर्ण कर लिया है। वह जन्म एव मृत्यु दोनों भयों को पार करके मोक्ष प्राप्त कर लेता है॥१-५॥

मूलम्- मत्स्यपुराणस्य मासमेकमिति वचनं प्रकृत्य त्रिस्थलीसेतुकारेणोक्तम्-

इदं चान्यत्र मृतस्यापि काशीवासमात्रस्य मुक्तिबीजतया जन्मान्तराभिप्रायेण परम्परया परमगतिरूपमोक्षप्राप्तिः फलं ज्ञेयम्। अत एवोक्तम्-

पूर्वोक्त मात्स्यवचन (मासमेकम्) को उद्धृत करके त्रिस्थलीसेतुकार का कथन है कि उद्धृत मात्स्यवचन काशीवास मात्र करने वाले की अन्यत्र मृत्यु हो जाने पर भी मुक्ति का बीज होने से जन्मान्तर में परम्परा से परमगति रूप मोक्ष प्राप्तिफलपरक है। इसी कारण कहा है-

बहुकालमुषित्वाऽपि नियतेन्द्रियमानसः।
यद्यन्यत्र विपद्येत दैवयोगाच्छुचिस्मिते॥६॥
सोऽपि स्वर्गसुखं भुक्त्वा भूत्वा क्षितिपतीश्वरः।
पुनः काशीमवाप्यार्ये विन्देन्निःश्रेयसं परम्॥७॥

तथा- **एकाहारस्तु यस्तिष्ठेन्मासमेकं वरानने।**
यावज्जीवं कृतं पापं मासेनैकेन शुद्ध्यति॥८॥

स्कान्दे-**निमेषमात्रमपि यो ह्यविमुक्तेऽति भक्तिमान्।**
ब्रह्मचर्यसमायुक्तस्तेन तप्तं महत्तपः॥९॥
सम्वत्सरं वसँस्तत्र जितक्रोधो जितेन्द्रियः।
अपरस्वविपुष्टांगः परान्नपरिवर्जकः॥१०॥

परापवादरहितः किञ्चिद्दानपरायणः।
समाः सहस्रमन्यत्र तेन तप्तं महत्तपः।।११।।

ब्रह्मवैवर्ते- **अहोरात्रं स्थिता ये तु पुण्यसम्भारसन्ततिः।**
तेषां प्रवर्धते नित्यं माससम्वत्सरक्रमैः।।१२।।

स्कन्दपुराण में कहा है कि क्षणमात्र भी जो भक्तिपूर्वक ब्रह्मचर्य पालन करते हुए अविमुक्त में निवास कर लेता है, मानों उसने श्रेष्ठतप कर लिया। वर्षपर्यन्त जितक्रोध एवं जितेन्द्रिय रहते हुए दूसरों के अन्न से स्वशरीरपोषण न करने वाला, परान्नत्यागी, परनिन्दा न करते हुए स्वल्प मात्र भी दान में तत्पर अविमुक्त क्षेत्र में निवास करने वाले व्यक्ति न मानो अन्यत्र हजारों वर्षों तक रह कर जो तप किया उससे भी श्रेष्ठ तप कर लिया। ब्रह्मवैवर्त के अनुसार एक दिन भी जो अविमुक्त क्षेत्र में निवास कर लेता है उसकी पुण्यपरम्परा का मास-वर्षादि क्रम से अनवरत विस्तार होता रहता है।।६-१२।।

।। अथ क्षेत्रसन्यासः ।।

ब्रह्मवैवर्त्ते- **आनन्दाख्ये कानने ये वसन्ति।**
क्षेत्रन्यासं संविधायात्र पुत्र!
तैर्वस्तव्यं रुद्ररूपैर्हि यत्नात्।
यतो रुद्रो धर्मपालः प्रसिद्धः।।१३।।

तथा- **अनेकजन्मसु महत् साधनैर्ज्ञानमुत्तमम्।**
प्राप्नुवन्ति तदेकेन जन्मना साधु वासिनः।।१४।।
अविमुक्तं समासाद्य न त्यजेन्मोक्षकामुकः।
क्षेत्रन्यासं दृढं कृत्वा वसेद् धर्मपरः सदा।।१५।।
यथा पतिव्रता नारी भर्त्तारमनुगच्छति।
तथाऽस्य हस्तमालम्ब्य काशीमनुगतो भवेत्।।१६।।

तथा- **वाराणसीं समासाद्य यो बहिर्गन्तुमिच्छति।**
तदन्नं वर्जयेद्धीमाँश्चाण्डालस्यान्नवत् सदा।।१७।।
मोहेनापि बहिर्गन्तुमनुज्ञां यः प्रयच्छति।
रौरवादिषु घोरेषु नरकेषु पतत्यधः।।१८।।

तथा- **यस्याः प्रसादादन्यास्तु पुर्यो मोक्षं वितन्वते।**
तां काशीं को न सेवेत मोक्षार्थी सर्वदा शुभाम्।१९।।

अब क्षेत्र सन्यास पर विचार प्रस्तुत है। त्रिस्थलीसेतुकार ने 'नामूलं लिख्यते किञ्चिनानपेक्षितमुच्यते' इस मार्ग का निर्विच्छिन्न अनुसरण कर प्रस्तुत 'क्षेत्र सन्यास' के विषय में ब्रह्मैवर्त्तपुराण का वचन प्रस्तुत किया है। तदनुसार - आनन्द कानन में क्षेत्र सन्यास का संकल्प लेकर जो निवास करते हैं, उन्हें रुद्ररूप ही मानना चाहिए। क्योंकि रुद्र धर्मपाल के रूप में विख्यात है। अनेकानेक जन्मों में अनेकानेक साधनों से जो उत्तमोंत्तम ज्ञान प्राप्त हो सकता है वह अविमुक्त क्षेत्रवास करने पर एक ही जन्म में प्राप्त हो जाता है। 'अविमुक्त' प्राप्त करके मुमुक्ष को उसका त्याग कदापि नहीं करना चाहिए। प्रत्युत 'क्षेत्र संन्यास' को दृढ़ करते हुए सर्वथा धर्म के प्रति समर्पित रह कर निवास करना चाहिए। जिस प्रकार पतिप्राणा नारी पति का (जीवित अथवा मृत) सर्वात्मना अनुकरण करती है उसी प्रकार 'अविमुक्त' का आश्रयण करते हुए काशी का अनुगमन (सेवन) करना चाहिए। वाराणसी को प्राप्त करके जो बाहर जाने की इच्छा करता है उसके अन्न का चाण्डाल के अन्न की तरह सदा त्याग देना चाहिए। भूलकर भी जो काशी से बाहर जाने की आज्ञा देता है वह (रौरव-महारौरव-सन्तापन-तपन-संघात-कालसूत्रादि घोर नरकों) में अधः पतित हो जाता है।

जिसके प्रसाद से मथुरा अयोध्या-काञ्ची-हरिद्वार-द्वारिका-अवन्तिका आदि पुरियाँ मोक्ष का वितरण (दान) करती रहती हैं उस काशी का सेवन कौन मोक्षार्थी नहीं करता? अर्थात् काशी मुमुक्षुओं की परमाराध्या एवं सदा सर्वदा शुभकारिणी ही है।।१३-१९।।

तथा- **वसन्ति पापा न हि काशिकायाम्।**
वसन्ति चेदत्र मृतिर्न जायते।।२०।।
मृतिर्भवेच्चेन्न हि यातनाक्षयः।
क्षये भवेन्मोक्षसुखे तु धिक्कृतः।।२१।।

तथा- **तीर्थानि कृत्वा काश्यां तु वसेन्निर्व्याकुलः सदा।**
न तु काश्याः प्रगन्तव्यं तीर्थान्यत्र वसन्ति हि।।२२।।

काशी में पापी बस नहीं सकते। कथंचित् बसे रहें तो उनकी काशी में मृत्यु नहीं हो सकती। यदि मृत्यु हो भी जाये तो भैरवी यातना का क्षय नहीं हो सकता। यातना का क्षय हो तो भी मोक्षानन्द से वंचित ही रहता है। नास्तिकों का निव्वान शरीरपात मात्र है जब कि आस्तिकों का मोक्ष आनन्दमहार्णव है। जिसमें सदानन्द और चिदानन्द तरंगें उछलती इठलाती, कल्लोल करती रहती हैं। भूमण्डल के समस्त तीर्थों की यात्रा करके निर्व्याकुल होकर काशी में रहना चाहिए। काशी से बाहर नहीं जाना चाहिए। क्योंकि काशी में सभी तीर्थों का स्थिर निवास है।।२०-२२।।

सनत्कुमारसंहितायाम्-

नष्टेषु सर्वेषु कलावुपाये-
स्वासाद्य काशीं शिवराजधानीम्।
लिङ्गं प्रतिष्ठाप्य वरं स्वनाम्ना
वसेत्सदा विघ्नशतैर्हतोऽपि।।२३।।

सनत्कुमार संहिता में कहा है कि-

कलियुग में सभी प्रयत्नों के विफलता से साम्बविश्वनाथ की राजधानी प्राप्त हो जाने पर वहाँ अपने नाम से शिवलिङ्ग की स्थापना करके, हजारों विघ्नों से आक्रान्त होने पर भी काशीवास करना चाहिए।।२३।।

काशीखण्ड के अनुसार-

काशी खण्डे-**ज्ञात्वा क्षेत्रस्य माहात्म्यं यो वसेत् कृतनिश्चयः।**
तं तारयति विश्वेशो जीवन्तं त्वथवा मृतम्।।२४।।

जन्मान्तरसहस्रैस्तु यत्पुण्यं समुपार्जितम्।
तत्पुण्यपरिवर्त्तेन काश्यां वासोऽत्र लभ्यते।।२५।।

क्षेत्र की महिमा समझकर जो मनुष्य कृतसंकल्प होकर काशी वास करता है उसे विश्वनाथ जीवित अथवा मृत अवस्था में मुक्ति प्रदान करते हैं।

तथा- **काशी द्विजाशीर्भिरहो यदाप्ता।**
कस्तां मुमुक्षुर्यदि वाऽऽमुमुक्षुः।।२६।।
ग्रासं करस्थं स विसृज्य हृद्यम्।
श्वकूर्परं लेढि विमूढचेता।।२७।।

काशीखण्ड के पञ्चमाध्याय के अनुसार संस्कारवान् ब्राह्मणों के आशीर्वाद से यदि काशी प्राप्त हो गयी तो मुमुक्षु या अमुमुक्षु कोई भी काशी छोड़ने की सोचे ही क्यों? कोई भी प्रिय खाद्य हाथ में आ जाय तो कुत्ते के मल कौन चाटे? ऐसा करने वाला विमूढचेता ही हो सकता है?।।२६-२७।।

तथा- **सापदं सम्पदं ज्ञात्वा सापायं कायमुच्चकैः।**
चपलाचपलं चायुर्मत्वा कशीं समाश्रयेत्।।२८।।

तथा- **यस्तत्र निवसेद् विप्र संयतात्मा समाहितः।**
त्रिकालमपि भुंजानो वायुभक्षसमो भवेत्।।२९।।

तथा- **अद्य प्रातः परश्वो वा मरणं प्राप्यमेव च।**
यावत्कालविलम्बोऽस्ति तावत्काशीं समाश्रयेत्।।३०।।

सम्पत्ति को आपत्तिमयी तथा शरीर को नश्वर, आयु को अस्थिर जानते हुए काशी का आश्रय ग्रहण कर लेना चाहिए। जो काशी में संयत चित्त होकर वास करता है। वह त्रिकालभोजन करता हुआ भी वायुभक्षी के समान मान्य हैं।

आज, प्रातः अगले दिन, कभी भी मृत्यु होनी ही है। अतः जब तक मृत्यु प्राप्ति में विलम्ब है, तब तक काशी का आश्रयण करना चाहिए।।२८-३०।।

कौर्मे- **मोक्षं सुदुर्लभं मत्वा संसारं चातिभीषणम्।**
अश्मना चरणौ हत्वा वाराणस्यां वसेन्नरः।।३१।।

तथा- **कृत्वा वै नैष्ठिकीं दीक्षामविमुक्ते वसन्ति।**
तेषां तत्परमं दानं ददाम्यन्ते परं पदम्।।३२।।

अर्थात्- 'मोक्ष को अत्यन्त दुर्लभ तथा संसार को भीषण समझते हुए दोनो पैरों को पत्थर से तोड़कर भी वाराणसी वास करना चाहिए। अर्थात् काशी कभी नहीं छोड़नी चाहिये। जो लोग नैष्ठिक दीक्षा पूर्वक अविमुक्त मे वास करते हैं उन्हें मैं सब दानों में श्रेष्ठ 'मोक्ष' प्रदान करता हूँ। अन्त में उन्हें परम पद भी दे देता हूँ।।३१-३२।।

काशीखण्डे-

वरं वाराणसी वासी जटी मुण्डी दिगम्बरः।
नान्यत्रच्छत्र संछन्नवसुधामण्डलेश्वरः।।३३।।
वरं वाराणसी भिक्षा न लक्षाधिपता गृहे।
लक्षाधीशो विशेद् गर्भं तद् भिक्षाशी न गर्भभाक्।३४।।

काशी खण्ड में कहा गया है कि जटाधारी, घुटमुण्ड, नग्न काशीवासी भी अन्यत्र विद्यमान करोड़पति से महान है। लक्षाधीश तो मरने के पश्चात् गर्भवास का दुःख पाता है किन्तु काशी में भिक्षा से जीवन चलाने वालों को काशीवास के कारण विश्वनाथ की कृपा से पुनः गर्भवास का कष्ट नहीं होता। अर्थात् बन्धन से मुक्त हो जाता है।।३३-३४।।

तथा-**रुद्रावासे वसेन्नित्यं नरो नियतमानसः।**
एनसामपि सम्भारं कृत्वा कालाद् विमुच्यते।।३५।।

तथा-**विधाय क्षेत्रसन्यासं ये वसन्तीह मानवाः।**
जीवन्मुक्तास्तु ते देवि तेषां विघ्नं हराम्यहम्।।३६।।

तथा-**स सर्वतीर्थसुस्नातः स सर्वक्रतुदीक्षितः।**
स दत्तसर्वदानस्तु काशी येन निषेविता।।३७।।

तथा-**कलिः कालः कृतं कर्म त्रिकण्टकमितीरितम्।**
एतत् त्रयं न प्रभवेदानन्दवनवासिनाम्।।३८।।

पाद्मे- **सन्त्यनेकानि तीर्थानि पृथिव्यां मुनिसत्तम।**
तथापि जन्तुना काशी सेव्या सर्वप्रयत्नतः।।३९।।

पद्ममहापुराण में कहा गया है कि हे मुनिश्रेष्ठ! पृथ्वी में अनेकानेक तीर्थ हैं जिनमें लोग वास करने वाले भी हैं। किन्तु प्राणी को सभी प्रयासों से काशीवास करना चाहिए।।३९।।

लिङ्गपुराणे- **अविमुक्तं निषेवेत संसारभयमोचनम्।**
भोगमोक्षप्रदं दिव्यं बहुपापविनाशनम्।।४०।।
विघ्नैरालोड्यमानोऽपि योऽविमुक्तं न मुञ्चति।
स मुञ्चति जरां मृत्युं जन्म चैतदशाश्वतम्।।४१।।
न सा गतिः कुरुक्षेत्रे गङ्गाद्वारे च पुष्करे।
या गतिर्विहिता पुंसामविमुक्तनिवासिनाम्।।४२।।
अविमुक्ते स्थिता नित्यं पांसुभिर्वायुनेरितैः।
स्पृष्टा दुष्कृतकर्माणो यास्यन्ति परमां गतिम्।।४३।।
अविमुक्ते वसेद्यस्तु मम तुल्यो भवेन्नरः।।

तथा- **काश्यां योगो न दुष्प्रापः काश्यां मुक्तिर्न दुर्लभा।**
ततोऽनिशं निषेवेत काशीं मोक्षाप्तये नृणाम्।।४४।।

लिङ्गमहापुराण के वचनानुसार संसार के भय से मुक्ति प्रदान करने वाले ऐसे दिव्य भोगमोक्षप्रद, बहुपापों के विघातक, अविमुक्त क्षेत्र में वास करना चाहिए। विघ्नों द्वारा आहत होते रहने पर भी जो प्राणी अविमुक्त क्षेत्र काशी का परित्याग नहीं करता है वह अवश्य ही असार संसार के जरा एवं मृत्यु तथा अशाश्वत पुनर्जन्मों के अस्थिर बन्धनों से मुक्त हो जाता हैं। कुरुक्षेत्र, गंगाद्वार, पुष्कर आदि में वास करने वालों को भी वह गति नहीं प्राप्त हो सकती जो अविमुक्त (काशी) क्षेत्र में निवास करने वालों को प्राप्त हो जाती है।

भूमण्डल के समस्त तीर्थों के पुण्यों की अपेक्षा अविमुक्त क्षेत्र में निवास श्रेष्ठतम है क्यों कि इस क्षेत्र का नियतवासी शिवात्मक हो जाता है। अविमुक्त

क्षेत्र के निवासी दुष्कर्मा प्राणी भी अविमुक्त क्षेत्र के वायुवेगों से उठी धूलिकणों द्वारा स्पर्श प्राप्त करके परमगति प्राप्त करते हैं। अविमुक्त क्षेत्र में वास करने वाले मेरे जैसे (शिव तुल्य) हो जाते हैं। काशी में योग दुर्लभ नहीं है। काशी में मुक्ति भी दुर्लभ नहीं है। अत: मोक्ष प्राप्ति के लिए मानव को सर्वदा काशी का सेवन करना चाहिए।।४०-४४।।

मात्स्ये-**आदेहपतनाद् यावत् क्षेत्रं यो न विमुञ्चति।**
न केवलं ब्रह्महत्या, प्राकृतश्च निवर्त्तते।।४५।।

प्राकृत: = संसार:।

तथा- **अविमुक्तं न सेवन्ते मूढा ये तामसा नराः।**
विण्मूत्ररेतसां मध्ये ते वसन्ति पुनः पुनः।।४६।।

पुन: पुन: गर्भवासं प्राप्नुवन्तीत्यर्थ:।

अविमुक्तं यदा गच्छेत् कदाचित् कालपर्ययात्।
अश्मना चरणौ कृत्वा तत्रैव निधनं व्रजेत्।।४७।।

देहपात पर्यन्त जो अविमुक्तक्षेत्र का त्याग नहीं करता उसके ब्रह्म हत्या एवं प्राकृत संसार निवृत्त हो जाते हैं। जो अविमुक्त का सेवन नहीं करते वे ही तमोगुणी हैं। विष्ठामूत्रादि (जठर) के मध्य में उनका बार-बार वास होता है। यदि अविमुक्त क्षेत्र में कालवशात् पहुँच जाये तो उसे पत्थरों से पाँव तोड़कर भी वहीं मृत्यु प्राप्त करना चाहिए। अविमुक्तवास से जननीजठारवृत्ति (पुनर्जन्म) निवृत्त हो जाती है।।४५-४७।।

"रुद्रावास (काशी) में नियमपूर्वक नियन्त्रित दृढ़ चित्त होकर वास करना चाहिए। ऐसा प्राणी पापों का विशाल संग्रह रखने वाला होकर भी मृत्यु पाश से मुक्त हो जाता है।"

(क्षेत्रसन्यास का संकल्प लेकर जो मनुष्य काशी वास करते हैं वे जीवन्मुक्त हैं। मैं उनके अतीतानागत समस्त विघ्नों का हरण कर लेता हूँ।

जो काशी वास करता है मानों उसने सभी तीर्थों में सविधि स्नान कर लिया। उसने समस्त क्रतुओं की दीक्षा सम्पन्न कर लिया। उसने सविधि सभी दानों का सम्पादन कर लिया। काशीवास, समस्ततीर्थों,

समस्त दीक्षाओं एवं दानों के सम्पादन से जो फल प्राप्त होता है वह काशीवास मात्र से प्राप्त हो जाता है।

कलियुग, काल एवं कर्म ये ही त्रिकण्टक कहे गये हैं। आनन्दवन (काशी) में रहने वालों को इन तीनों काँटों से कष्ट नहीं प्राप्त होता।)

ब्रह्मवैवर्त्ते-**यस्तु काश्यां वसेज्जन्तुः सर्वव्यापारकृन्नरः।**
तस्यापि या गतिः प्रोक्ता न सा यज्ञैर्न चान्यतः।।४८।।

सभी कर्मों का सम्पादन करता हुआ जो मनुष्य काशी में यदि वास करता है, तो उसकी जैसी सद्गति होती है वह न यज्ञों से हो सकती है न तो अन्य (योगादि) साधनों से ही सम्भव है।।४८।।

पूर्वानुवृत्त- **अविमुक्तं प्रविष्टस्तु यदि गच्छेत् ततः पुनः।**
तदा हसन्ति भूतानि अन्योन्यकरताडनैः।।४९।।

तथा- **कामक्रोधेन लोभेन ग्रस्ता ये भुवि मानवाः।**
निष्क्रामन्ते नरा देवि दण्डनायकमोहिताः।।५०।।

अविमुक्त क्षेत्र में प्रविष्ट प्राणी यदि वहाँ से अन्यत्र चला जाता है तो अदृश्य प्राणी तालियाँ बजाते हुए उसकी हँसी उड़ाते हैं कि जिस क्षेत्र में प्रवेश हेतु लोग महाप्रयत्न करते हैं, इस मूर्ख ने उसे पाकर भी छोड़ दिया। तथा, भूमण्डल के काम क्रोध लोभ ग्रस्त जो भी मनुष्य काशी में आते हैं वे दण्डनायक भैरव की माया से मोहित होकर काशी (अविमुक्त) क्षेत्र से निष्कासित कर लिये जाते हैं।।४९-५०।।

लैङ्गे- **विदित्वा भङ्गुरं लोकं येऽस्मिन् वत्स्यन्ति मत्पुरे।**
अन्तकालेऽपि वत्स्यन्ति तेषां भवति मोक्षदम्।।५१।।

तथा- **श्रुत्वा कलियुगं घोरमल्पायुषमधार्मिकम्।**
सिद्धक्षेत्रं न सेवन्ते जायन्ते च म्रियन्ति च।।५२।।

जो मानव जगत् को नश्वर मानकर मेरे पुर (अविमुक्त) में वास करेंगे तथा जीवन के अन्ततक यहीं बने रहेंगे, उनके लिये यह क्षेत्र मुक्तिदायक है।

कलियुग को भयङ्कर, अल्पायु एवं अधार्मिक जानकर, जो सिद्धक्षेत्र

(अविमुक्त) का सेवन नहीं करते वे जन्म-मृत्यु के बन्धन से मुक्त नहीं होते। 'पुनरपि जननं पुनरपि मरणम्' के भवचक्र से मुक्ति हेतु अविमुक्तक्षेत्र वास अचूक अस्त्र है।।५१-५२।।

मात्स्ये-**अनन्यमानसो भूत्वा योऽविमुक्तं न मुञ्चति।**
तस्य देवः सदा तुष्टः सर्वान् कामान् प्रयच्छति।।५३।।

मत्स्य पुराण के वचनानुसार जो मनुष्य अनन्यचित्त होकर अविमुक्त क्षेत्र में ही रहता है तथा उसका त्याग नही करता उस पर 'देव' (महादेव) सदा प्रसन्न रहते हैं तथा उसकी समस्त अभिलाषाये पूर्ण करते हैं।।५३।।

ब्रह्मपुराणे- **आदेहपतनाद्ये तु क्षेत्रं सेवन्ति मानवाः।**
ते मृता हंसयानेन दिव्यं यान्त्यकुतोभयाः।।५४।।

दिव्यं देवस्थानम्। अत्र क्षेत्रपदोपादानात् क्षेत्रमात्रमृतविषयमेतत्। मोक्षफला- श्रवणात्।'

'ब्रह्मपुराण में कहा गया है कि शरीरपात पर्यन्त इस क्षेत्र का सेवन करते हैं वे भयमुक्त होकर हंसयुक्त विमान से स्वर्ग की यात्रा करते हैं।।५४।।

त्रिस्थलीसेतुकार स्पष्ट करते हैं कि उपर्युक्त वचन में दिव्य पद स्वर्गपरक है। क्षेत्र पद का उपादान होने कारण क्षेत्र में मृत्यु मात्र विषयक यह वचन है क्योंकि मोक्ष रूप फल कथित नहीं है।

पाद्मे- **काश्यां तिष्ठन्ति ये केचित् तान् पश्यन्ति सुरोत्तमाः।**
चतुर्भुजाँस्त्रिनयनान् गंगोद्भासितमूर्धजान्।।५५।।

मरणानन्तरं सारूप्यप्राप्त्या जीवद्दशायामेव वा, क्षेत्रमाहात्म्यादेवं पश्यन्तीत्यर्थः।

''मनुष्य काशी में निवास करते हैं उनको देवश्रेष्ठगण चार भुजाओं से युक्त विष्णु व तीन नेत्र युक्त तथा गंगा से समलंकृत जटाजूटधारी अर्थात् शिव के रूप में देखते हैं।''।।५५।।

'त्रिस्थली सेतु' कार यहाँ स्पष्ट करते हैं की 'काशी में देह त्यागने पर

शिव के समान रूप की प्राप्ति हो जाती है। क्षेत्र की महिमा से जीवित दशा में ही स्वर्गस्थ देवता उन्हें शिवस्वरूप में दखते हैं।'

अविमुक्ते तु यस्तिष्ठेदाकलेवरपातनात्।
तं विश्वेशोऽत्र जीवन्तं मृतं च परिरक्षति।।५६।।

वहीं (पद्मपुराण) में यह भी कहा गया है कि जो शरीरान्त पर्यन्त अविमुक्त क्षेत्र में निवास करते हैं उनकी जीवित अथवा मृत स्थिति में विश्वेश्वर सर्वथा रक्षा करते हैं।।५६।।

लैङ्ग- **अविमुक्तं समासाद्य नान्यद् गच्छेत्तपोवनम्।**
सर्वात्मना तपः सत्यं प्राणिनां नात्र संशयः।।५७।।

तथा- **अष्टौ मासान् विहारः स्यात् यतीनां संयतात्मनाम्।**
एकत्र चतुरो मासानब्दं वा न वसेत् पुनः।।५८।।
अविमुक्ते प्रविष्टस्य विहारस्तु न विद्यते।
न दोषोऽपि भवेत्तस्य दृष्टं शास्त्रे पुरातने।।५९।।

लिङ्ग महापुराण के अनुसार अविमुक्त क्षेत्र प्राप्त हो जाने पर दूसरे तपोवन में नहीं जाना चाहिए। सर्वात्मना अर्थात् मनसा वाचा कर्मणा 'सत्य' ही प्राणियों के जीवन का सार है। 'सत्य' ही धर्म है, इसमें कोई संशय नहीं है। संयतात्मा यति को चाहिए वे वर्ष के आठ मास भ्रमण करें। मात्र चार मास ही एक स्थान पर निवास करें। पूरा वर्ष एक स्थान पर नहीं रहें। किन्तु अविमुक्त में प्रवेश कर लेने पर भ्रमण अनावश्यक है। वहाँ दोष नहीं होता। यह प्राचीन शास्त्रों में देखा गया है।।५७-५९।।

त्रिस्थलीसेतुकार कहते हैं- काशी निवासी को शरीर निर्वाहादि की चिन्ता नहीं करनी चाहिए। इस अर्थ में काशीखण्ड में कहा गया है-

सर्वार्थानामत्र दात्री भवानी।
सर्वान् कामान् पूरयेदत्र दुण्ढिः।।५९।।
सर्वान् जन्तून् मोचयेदन्तकाले।
विश्वेशोऽत्र श्रोत्रमन्त्रोपदेशात्।।६०।।

इस परमपवित्र काशी में रहने वाले प्राणी को भवानी समस्त अर्थ प्रदान

करती है। उसकी समस्त इच्छाओं को ढुण्ढिराज गणेश पूर्ण करते हैं। अन्तकाल में यहाँ रहने वाले प्राणियों को, विश्वनाथ कानों में मन्त्रोपदेश करके मोक्ष प्रदान करते हैं।।५९-६०।।

लैङ्गे- **केवला जाह्नवी विप्रा ज्ञाताऽज्ञाताऽथ वा पुनः।**
अपवर्गं वितरति स्वतोये त्यक्तदेहिंनः।।६१।।
यस्य कस्यापि वा जन्तोर्भागीरथ्यां गतायुषः।
न दुर्लभो ब्रह्मभावस्तत्संगक्षपितांहसः।।६२।।
चिदानन्दमयं ब्रह्म गंगाभावमुपागतम्।
ब्रवीमि सत्यमेवैतन्माऽत्र वः संशयो भवेत्।।६३।।
एवं प्रभावा निर्वाणतोयराशिवहा नदी।
भागीरथी विलसति क्षेत्रे शम्भोर्विमुक्तिदे।।६४।।
एकैकमपि विप्रेन्द्राः साक्षाद् ब्रह्माप्तिसाधनम्।
न चित्रमत्र द्वितयं यन्निर्वाणाय कल्पते।।६५।।
कीकटेऽपि प्रमीतस्य पापकर्मरतस्य च।
यद्यस्थिखण्डं गंगायां निपतेद्दैवयोगतः।।६६।।
तदा संक्षीणपापः सन् दिव्यभोगसमन्वितः।
षष्ठिर्वर्षसहस्राणि स्वर्गलोके महीयते।।६७।।
ईदृशी स्वर्णदी यत्र सर्वतीर्थसमन्विता।
तां काशीं को न सेवेत भीमसंसारमुक्तये।।६८।।

लिङ्गमहापुराण के अनुसार, विप्रों।। केवल राजर्षिजह्नुतनया द्रवीभूत ब्रह्मरूपा ज्ञात अथवा अज्ञात जैसे तैसे भी अपने जल में शरीर त्यागने वालों को मोक्ष देती रहती है। जिस किसी भी प्राणी के मरने पर गंगासंग से निर्धूत पाप होने कारण ब्रह्मभाव दुर्लभ नहीं है। चिदानन्दाभिन्न ब्रह्म ही द्रवीभूत होकर गंगा प्रवाह रूप हो गया है। यह मैं सत्य कह रहा हूँ। इसमें संशय नहीं है। इस प्रकार परमाचिन्त्य दिव्यातिदिव्य प्रभावमयी निर्वाणतोयराशिप्रवाहमयी

नदी भागीरथी कल्याणोद्गमा विश्वेश्वर के मोक्ष प्रद 'अविमुक्त' में कल्लोल करती हुई विराजमान है।

एक एक तत्त्व भी यहाँ ब्रह्म प्राप्ति का समर्थ साधन है। द्वितीय न भी होता तो भी कोई विचित्र न होता। कीकट (दक्षिण मगध) में पापकर्मलिप्त प्राणी का अस्थि खण्ड, मरने के पश्चात् भी गंगा में संयोग से गिर जाय तो वह दिव्यभोगयुक्त होकर साठ हजार दिव्य वर्षों तक स्वर्गलोक में निवास करता है। इस प्रकार स्वर्णदी गंगा जहाँ तीर्थ स्वरूपिणी विराजमान है उसकी सेवा (काशीवास) कौन न करे जो घोर संसार सागर से मुक्त होना चाहता है।।६१-६८।।

कौर्मे- **तस्मान् मुमुक्षुर्नियतो वसेदामरणान्तिकम्।**
वाराणस्यां महादेवाज्ज्ञानं लब्ध्वा विमुच्यते।।६९।।
वसेदामरणाद् विप्रो वाराणस्यां समाहितः।
सोऽपीश्वरप्रसादेन याति तत्परमं पदम्।।७०।।

तथा- **सम्प्राप्य काशीं शिवराजधानीम्**
किं यासि रे मूढ दिगन्तराणि।
निधानकुम्भं चरणेन हत्वा-
चाण्डालसेवां प्रकरोषि नित्यम्।।७१।।

कूर्म महापुराण के अनुसार- उन कारणों से मृत्यु पर्यन्त मोक्षकांक्षी को निश्चयपूर्वक काशी में रहना चाहिए। वाराणसी में महादेव से मोक्षप्रदज्ञान प्राप्त करके मोक्षप्राप्ति हो जाती है। वह ईश्वर की कृपा से भवबन्धन (पुनर्जन्म) से मुक्त हो जाता है। तथा वहीं यह भी कहा है कि-

हे मूढ! शिवराजधानी काशी को प्राप्त करके दूसरी दिशा में क्यों भटक रहे हो? रत्नों के घडे को ठोकर मार कर नित्यनिरन्तर चाण्डाल की सेवा में तत्पर हो रहे! हो। काशी का त्याग करके अन्यत्र जाना महती मूर्खता है। अत: काशी में ही रहो। विश्वेश्वर काशी वासी को सब कुछ देते हैं। भोग स्वर्ग अपवर्ग सब विश्वेश्वर की कृपा से सहजसुलभ है।।६९-७१।।

शिवपुराणे-**देवो देवी नदी गंगा मृष्टमन्नं शुभागतिः।**

वाराणस्यां विशालाक्षि वासः कस्य न रोचते।।७२।।

देव महादेव, देवी अन्नपूर्णा, गंगा नदी, मधुर अन्न, सद्गतिप्रदायिनी वाराणसी नगरी में निवास किसे नहीं प्रिय लगता। 'विशालाक्षी' काशी की तो शक्ति ही हैं।।७२।।

यदि स्वयं काशीवासं कर्तुं न शक्नोति तदा ब्राह्मणं वासयेत्। तदुक्तं पाद्मे-

पद्मपुराण में कहा है कि यदि स्वयं काशीवास करने में असमर्थ हो तो सत्पात्र ब्राह्मण को काशी में गृह-जीविका आदि देकर बसा देना चाहिए।

काशीं वासं कर्त्तुकामो यदि स्याद्।
दूरस्थोऽपि ब्राह्मणं धर्मनिष्ठम्।।७३।।
तदा चावासं वस्त्र भोज्यादि दत्त्वा।
श्रद्धायुक्तः सर्वथा वासयीत।।७४।।
वाराणस्यां वासयन् ब्राह्मणाग्र्यम्।
द्वयोश्छिन्द्याद् दुष्टसंसारबन्धम्।।७५।।
तस्मात् तत्र स्थापनीयाः प्रयत्नाद् ।
विप्राः राजन् दूरगेणापि मुक्त्यै।।७६।।

यदि दूर रहने वाला कोई स्वयं काशी वास न कर सके तो उसे चाहिए कि किसी धर्मनिष्ठ ब्राह्मण को विविध वस्त्र भोज्यादि देकर श्रद्धा पूर्वक उसे काशी में वास हेतु स्थापित करें। वाराणसी में विद्वान् ब्राह्मणश्रेष्ठ को वास प्रदान करने से बसाने वाले गृहस्थ एवं वास करने वाले ब्राह्मण दोनों का कल्याण होता है। दोनों के संसार बन्धन समाप्त हो जाते हैं। अतः दूर देश में निवास करने वाले गृहस्थ को चाहिए कि वह प्रयत्न पूर्वक मोक्ष प्राप्ति के लिए काशी में सत्पात्र ब्राह्मण को बसाये।।७३-७६।।

काशी खण्डेऽपि-

स्वयं वस्तुमशक्तोऽपि वासयेत्तीर्थवासिनम्।
अप्येकमपि मूल्येन स वस्तुः फलभाग्ध्रुवम्।।७७।।

स्वयं रहने (काशी वास) में असमर्थ होने पर किसी ब्राह्मण को तीर्थ में बसा देना चाहिए। एक भी ब्राह्मण को 'मूल्य' देकर बसाने से बसने एवं बसाने वालों का परम कल्याण होता है।।७७।।

ब्रह्मवैवर्त्ते- **परं साहसमास्थाय काश्यां स्थेयं मुमुक्षुभिः।**
साहसात् सिद्धिमाप्नोति नरो विकलमानसः।।७८।।

तथा- **यैर्यैरुद्वेजितो जन्तुस्त्यजेत् काशीं सुदुःखितः।**
ते ते नरकजालेषु पच्यन्ते पितृभिः सह।।७९।।

ब्रह्मवैवर्त्तपुराण में कहा है कि उत्कृष्ट साहस के साथ मुमुक्षु को काशी में रहना चाहिए। दृढ संकल्प से ही अस्थिरचित मानव सिद्धि (चित्तस्थैर्य) प्राप्त कर सकता है। 'साहस' शब्द 'सहस्' पद से अण् प्रत्यय करके बनता है। 'सहो मानसं बलम्' यह महाभारत में नीलकण्ठ का कथन है।

जिन-जिन के द्वारा उद्विग्न होकर प्राणी दुःखी होकर काशी का त्याग करता है वे अपने पूर्वजों के साथ नरकों के जाल में गिरकर दुःख भोगते हैं। अतः काशी में निवास करने वाले को किसी भी प्रकार पीड़ित नहीं करना चाहिए।।७८-७९।।

।। इति काशीवास महिमा का भाषानुवाद सम्पूर्ण ।।

।। अथ काशीवासिनो विहितनिषिद्धानि ।।

पाद्मे पातालखण्डे- भृगुरुवाच-

यत् पृष्टोऽहं मुनिश्रेष्ठाः कथं सेव्येति सा पुरी।
वदामि तदहं तत्त्वं श्रूयतामवधानतः।।१।।
विहाय काममर्थञ्च दम्भं मात्सर्यमेव च।
धर्ममोक्षौ पुरस्कृत्य निषेवेत विभोः पुरीम्।।२।।
प्रतिग्रहादुपावृत्तः शान्तिदान्तिसमन्वितः।
शङ्करध्याननिरतो निषेवेत विभोः पुरीम्।।३।।
अकुर्वन् कलुषं कर्म समलोष्ठाश्मकाञ्चनः।
पञ्चाक्षरपरो नित्यं निषेवेत विभोः पुरीम्।।४।।
गृही चेद् धर्मनिरतो स्वधर्मार्जितवित्तभुक्।
व्यवहारोपयोग्यत्र गृह्णानो विमलं वसु।।५।।
प्रियातिथिः सार्थपरो निषेवेत विभोः पुरीम्।
स्वाध्यायाध्ययने युक्तो गुरुशुश्रूषणे रतः।।६।।
ब्रह्मचारी धर्मरतो निषेवेत विभोः पुरीम्।।

पद्मपुराण के पाताल खण्ड में, भृगु कहते हैं कि आप लोगों ने पूछा कि काशी पुरी का सेवन कैसे करना चाहिए? मैं आपके प्रश्नों के उत्तर में काशीसेवन का रहस्य कह रहा हूँ। सावधानी से सुनो! कामना एवं लोभदम्भ-मात्सर्य को छोड़कर, धर्म एवं मोक्ष को ध्यान में रखते हुए, प्रतिग्रह से विरत रहते हुए, शान्त एवं दान्त भाव युक्त मन से शङ्कर के ध्यान में निरत, वैध धन से जीवनयापन करते हुए पापकर्म से विरत,

मिट्टी काष्ठ लोध एवं सोने में समदृष्टि रखते हुए पञ्चाक्षर मन्त्र जप में निरन्तर निरत रह कर काशी की उपासना करनी चाहिए। काशी निवास स्वयं में एक उपासना है। गृही हो तो स्वधर्मनिरत, सन्मार्ग से अर्जित वित्त से जीविका चलाते हुए, पवित्र धन स्वीकार करते हुए, अतिथियों के सत्कार में तत्पर, स्वाध्यायाध्ययन में तत्पर, गुरु (मातापितादि) की सेवा में निरत तथा ब्रह्मचारी, धर्मरत रहते हुए काशी में निवास करना चाहिए॥१-६॥

ब्रह्मवैवर्त्ते-**परान्नं परिवादश्च परदारास्तथा धनम्।।७।।**
अदानाचारविद्वेषाभक्ष्यालस्यानुदैन्यता ।
दश दोषा महादेवि वर्ज्याः काशीनिवासिभिः।।८।।
तथा- **यः काश्यां कुरुते पापं जनो मोहमदान्वितः।**
आवयोः कालराजस्य दण्डपाणेर्गणेशितुः।।९।।
अपराधी दुराचारः कथं सिद्धिमवाप्नुयात्।
मयापि यत्र सततं कालराजाद् हि बिभ्यता।।१०।।
स्थीयते सावधानेन काश्यामानन्दभोगिना।
स्थानानुरूपा वृत्तिर्हि शोभते पुरुषस्य च।।११।।
न ह्यग्निहोत्रशालायां क्रियते मलमोचनम्।

ब्रह्मवैवर्त्त पुराण में कहा गया है कि- १. परान्न, २. परिवाद, ३. परस्त्री ४. परधन, ५. अनुचित दान, ६. अनाचार, ७. विद्वेष, ८. अभक्ष्य, ९. आलस्य, १०. दैन्य। ये दश महादोष वर्ज्यं हैं। काशी निवासी को इनसे वचने का प्रयास करते हुए काशीवास करना चाहिए।

जो मोह एवं मद से युक्त होकर काशी में पाप करता है वह हम दोनों (शिव पार्वती) कालराज, दण्डपाणि गणेश के प्रति अपराधी है, अत: कैसे सिद्धि प्राप्त होगी? मैं भी जहाँ निरन्तर क़ालभैरव से भय मानते हुए सावधानी से काशी में आनन्दपूर्वक रहता हूँ। पुरुष की स्थान के अनुरूप वृत्ति से पुरुष की शोभा होती है तथा अग्निहोत्रशाला में मलमोचन भी उचित नहीं है॥७-११-॥

काशीखण्डे-

काश्यां पापं न कुर्वीत, दारुणा रुद्रयातना।
अहो रुद्रपिशाचत्वं नरकेभ्योऽपि दुःसहम्।।१२।।
अभिलष्यन्ति ये नित्यं धनं नानाप्रतिग्रहैः।
परस्वं कपटैर्वापि काशी सेव्या न तैर्नरैः।।१३।।

तथा- **आत्मरक्षात्र कर्त्तव्या महाश्रेयोऽभिवृद्धये।**
अत्राऽऽत्मत्यजनोपायं मनसापि न चिन्तयेत्।।१४।।
एकस्मिन्नपि यच्चाह्नि काश्यां श्रेयोऽभिलभ्यते।
न तु वर्षशतेनापि तदन्यत्राऽऽप्यते क्वचित्।।१५।।

काशीखण्ड के अनुसार काशी में पाप नहीं करना चाहिए। रुद्रयातना दारुण होती है। नरक से भी भयङ्कर दुःसह रुद्रपिशाच होना है। जो लोग अनेक प्रकार के प्रतिग्रहों की अपेक्षा करते हैं, छल कपट से दूसरे का हक हरते हैं उन्हें काशी का सेवन नहीं करना चाहिए।

आत्मा की रक्षा काशी में रहकर सदा करनी चाहिए। काशी में रहते हुए आत्महत्या के बारे में सोचना भी नहीं चाहिए। एक दिन में भी काशी में जितना श्रेय प्राप्त हो जाता है उतना श्रेय अन्यत्र से वर्षों में भी प्राप्त नहीं हो सकता।।१२-१५।।

तथा- **वासः काश्यां सज्जनानां प्रसङ्गो।**
गङ्गास्नानं पापकर्मारुचिश्च।।१६।।
पुण्यप्रीतिः स्वेच्छया लाभसौख्यम्
दानं शक्त्या न प्रतिग्राह्यमत्र।।१७।।
अष्टावेते यस्य सन्त्येव योगाः।
योगाभ्यासैस्तस्य किं काशिकायाम्।।१८।।

तथा- **असत्संगात् प्रत्यहं पापराशिः**
विधीयते सज्जनः संक्षिणोति।।१९।।

तस्मात् सन्तः सावधानेन सेव्याः।
सद्भिदनैः दुःखभारं जहाति।।२०।।
नारायणपरः काश्यां महादेवपरोऽथ वा।
भूत्वा सदाचाररतस्तिष्ठेदत्र न चान्यथा।।२१।।

यात्रा पूजानामसंकीर्त्तनादि-
स्नानं तीर्थेष्वेव तत्तद् दिनेषु।
सत्संगेऽन्यैर्नैव सम्भाषणादि
कुर्यादेवं देवदेवो दिदेश।।२२।।

स्नातव्यं जाह्नवीतोये द्रष्टव्यः पार्वतीपतिः।
स्मर्त्तव्यः कमलाकान्तो वस्तव्यं काशिकास्थले।।२३।।

काशी में निवास, सज्जनों का संग, गंगास्नान, पाप कर्मों से घृणा, पुण्यकर्मों में प्रीति, यथेच्छालाभ में सन्तोष, शक्तिभर दान, प्रतिग्रह न स्वीकार करना, ये आठ योग जिसने नियत कर लिये हैं उनके लिये योगाभ्यास काशी में अनावश्यक हैं।

तथा, असज्जनों के संग से प्रतिदिन पाप राशि संचित होती है। सज्जन प्रतिदिन क्षीण होता है। इसलिये सन्त सावधानीपूर्वक सेवनीय है। पवित्र दानों से मानव दुःख के भार को दूर करता है। काशीवासी को चाहिए कि वह नारायणनिष्ठ रहे या महादेवनिष्ठ रहे। सदाचारी होकर ही काशी में वास करें। असदाचारी होकर नहीं।

देवाधिदेव महादेव का आदेश है कि प्रतिदिन यात्रा, पूजा, नाम-संकीर्त्तनादि, नियत दिनों में तथा नियत तीर्थों में स्नान, सत्संग में दुष्टों से सम्भाषणादि न करना, ऐसा प्रतिदिन आचरण करें।

गंगाजल में स्नान करना चाहिए, पार्वतीपति शङ्कर का दर्शन करें। भगवान् कमलापति विष्णु का स्मरण करें तथा काशी में वास करें।।१६-२३।।

तथा-**दातव्यमिति काश्यां नो वक्तव्यं मनुजैः क्वचित्।**
अहोरात्रमतिक्रम्य तद् दानं द्विगुणं भवेत्।।२४।।

दशोत्तरं पर्वसु च शतं चन्द्रग्रहे भवेत्।
सूर्यग्रहे सहस्रं तु मरणेऽनन्तकं स्मृतम्।।२५।।
तस्माद् दातव्यमित्युक्तं देयमेव न चान्यथा।
बुधैस्तदेव वक्तव्यं दातुं शक्यं यदेव हि।।२६।।

तथा- ''उक्त्वा न दीयते यद्धि यातनावहमेव तत्।
दानमेव कलौ नृणां प्रायश्चित्तं न चेतरत्।।२७।।
काश्यामपि कृता दोषा नश्यन्ति हि सुदानतः।''
काशीस्थनिन्दनपरान् परमादरेण-
काश्यां मृतानपि हि यातयते महात्मा।
श्रीकालराज इति यः प्रथितः परेशः।।२८।।
सोऽस्यावमत्य सुकृतं परिशिक्षयेच्च।
तस्मात् काश्यां सर्वसत्वेषु बुद्धिः।।२९।।
कर्त्तव्या ते रुद्ररूपा सदाऽऽदौ।
पश्चादन्यद्धर्मजातं स्वशक्त्या।
कर्त्तव्यं ते पुत्रक! त्राणहेतोः।।३०।।

तथा- आत्मानं सद्गुणं मत्वा शास्त्राचरणसम्मतम्।
ततोऽन्यस्य करोत्यज्ञो निन्दां निन्दित एव सः।।३१।।
अत एव त्वया वत्स निन्दा कस्यापि देहिनः।
न श्रोतव्या न कर्त्तव्या न स्थेयं तत्र यत्र सा।।३२।।

तथा- आदौ काश्यां धर्ममार्गेण वासः।
पापत्यागः काशिमाहात्म्यदृष्टिः।।३३।।
देहं गेहं पुत्रमित्रादि यस्य
सर्वं तुच्छं सोऽधिकारी महात्मा।।३४।।

मनुष्यों को 'दे दूँगा' ऐसी प्रतिज्ञा काशी में नहीं करनी चाहिए। एक

दिन रात्रि के पश्चात् वह दान द्विगुणित देय हो जाता है। अमावस्या एवं पूर्णिमा पर दिया दान दशगुणित, चन्द्रग्रहण में दिया दान शतगुणित, सूर्य ग्रहण में शतगुणित, मृत्यु के समय का दान अनन्तगुणित हो जाता है। अतः 'दूँगा' ऐसी प्रतिज्ञा करने पर देना ही चाहिए अन्यथा प्रतिज्ञा नहीं करनी चाहिए। बुद्धिमान् को उतना ही करना चाहिए। जितना देने का सामर्थ्य हो। प्रतिज्ञा करके यदि न दिया जाय तो वह यातनाकर ही होता है। कलियुग में दान ही प्रायश्चित है। काशी में किये गये अतिचारजन्यदोष भी यथाविधि दान से ही नष्ट हो जाते हैं। काशीवासी की निन्दा में तत्परों को तथा काशी में मरने वालों को भी महात्मा कालराज (कालभैरव) यातना प्रदान करते हैं। वे कालराज स्वयं विश्वनाथ ही हैं। वह जीव को दण्डित करके शिक्षा भी देते हैं। इसलिए काशी में सभी प्राणियों में रुद्रबुद्धि पहले ही करनी चाहिए। हे पुत्र!! पश्चात् और भी धर्माचरण अपनी शक्ति के अनुसार अपनी रक्षा हेतु करना चाहिए।

अपने को सद्गुणी मानकर अपने आचरण को ही शास्त्रसम्मत मानकर पुनः दूसरे की निन्दा करने वाला मूर्ख है। वही निन्दित है। पहले काशी में धर्ममार्ग से निवास, पुनः पाप का परित्याग, काशी की महिमा पर आस्थामयी दृष्टि, देह गेह पुत्र मित्र आदि सब जिसके लिए तुच्छ हैं, वही अधिकारी है, वही महान् आत्मा है॥२४-३४॥

कौर्मे- **वर्णाश्रमविधिं कृत्स्नं कुर्वाणो मत्परायणः।**
तेनैव जन्मना ज्ञानं लब्ध्वा याति परं पदम्॥३५॥

मत्स्ये- **संहृत्य शक्तितः कामान् विषयेभ्यो बहिः स्थिताः।**
धर्मशीला जितक्रोधाः निर्ममा नियतेन्द्रियाः॥३६॥
ध्यानयोगपराः सिद्धिं गच्छन्ति परमं पदम्।

पाद्मे- **काश्यां कृतस्य पापस्य भोगो रुद्रपिशाचता॥३७॥**
एकैकस्य च पापस्य समानामयुतत्रयम्।
तस्मात् पापं न कर्त्तव्यं मनागपि विभोः पुरे॥३८॥

तथा- **अत्रत्यपापभोगस्तु दारुणो दानवेश्वर।**
एतत्कृताघसंघातो घोरां भुक्त्वा तु यातनाम्।।३९।।
पैशाच्यं समवाप्नोति वर्षाणामयुतत्रयम्।

आदौ नरक भोगः, पश्चात् रुद्रपिशाचतेत्यर्थः।

तथा च पाद्म एव-ऋषय ऊचुः-

पापात्मा किं पिशाचत्वं प्रथमं प्राप्नुयात् परम्।।४०।।
अथवाऽन्यत्र नरके पतेत् पूर्वं ततस्तु तत्।
एतद् विस्तरतो ब्रूहि सर्ववित् त्वं मतो हि नः।।४१।।

कूर्मपुराणानुसार साङ्गोपाङ्ग वर्णाश्रमविधि का पालन करने में तत्पर, मुझ में मनसा वाचा कर्मणा दृढास्थावान् मानव उसी जन्म में 'ज्ञान' (मोक्ष विषयक) प्राप्तकर के मोक्ष प्राप्त कर लेता है।

मत्स्यमहापुराण के अनुसार शक्ति के अनुसार अथवा बलपूर्वक इच्छाओं तथा विषयों से स्वयं को पृथक् करके, धर्मशील, जितक्रोध निर्मम एवं संयतेन्द्रिय होकर ध्यानयोगनिष्ठ जन परम पद के अधिकारी होते हैं।

पद्मपुराण में कहा गया है कि- काशी में किए गये पाप का फल है रुद्रपिशाच होना एक-एक पाप का फल तीस हजार वर्षों तक रुद्रपिशाच योनि की यातना है। इसलिए काशी में रहकर थोड़ा भी पाप नहीं करना चाहिए।

तथा, हे दानवेश्वर! काशी में किए गए पाप का फल अत्यन्त दारुण होता है। यहाँ सम्पादित पापसमूह के परिणामस्वरूप घोर यातना का भोग करके रुद्रपिशाच योनि की प्राप्ति होती है। तीस हजार वर्षों तक पिशाच योनि में रहना पड़ता है।

त्रिस्थलीसेतुकार का कथन है कि पहले नरक भोग तब रुद्रपिशाच योनि की प्राप्ति होती है। पद्मपुराण में ही कहा गया है जो भृगु एवं ऋषियों के सम्वाद् के रूप में है-

ऋषियों ने भृगु महर्षि से पूछा- पापात्मा क्या पहले पिशाच योनि प्राप्त करता है? अथवा अन्यत्र पहले नरक में पतित होता है। पश्चात् पिशाच योनि में जाता है?

उत्तर में भृगु महर्षि कहते हैं- क्षणभर रुकें। आप का कल्याण हो। पूर्वजों से जैसा सुना है तदनुसार कहता हूँ।।३५-४१।।

"काश्यां कृतस्य पापस्य फलं यद् यत् सुदारुणम्।
वाराणस्यां मृतःपापो नोपैति यमयातनाम्।।४२।।
नियन्ता भैरवस्तस्य कालराजः कपालभृत्।
अहो वत भृशं तीव्रा भीमा भैरवयातना।।४३।।
काश्यां कृतेन पापेन यद्दुखं समवाप्यते।"
अन्तकोऽपि न तद्दुःखं तादृशं चार्पितुं क्षमः।।४४।।

काशी में किए गए पाप का फल अत्यन्त दारुण है। वाराणसी में मृत पापी यमयातना नहीं भोगता है। उसके नियामक तो भगवान् भैरव कपाल धारी 'कालराज' है। अहो!! अत्यन्त तीव्र भयङ्करी भैरवी यातना है। काशी में किए गये पापों के फलस्वरूप जो दुःख प्राप्त होता है। वैसा दुःख तो अन्तक भी प्रदान नहीं कर सकता।।४२-४४।।

तथा-**अत्राप्युदाहरन्तीममितिहासं पुरातनम्।**
यं श्रुत्वैव न कस्यापि काश्यां पापोद्यमो भवेत्।।४५।।

इत्युपक्रम्य 'क्रमेलकोपाख्यानम्' उक्तम्। तस्यायमाशयः- 'धर्मात्मा द्विजभक्तश्च दयावाननसूयकः' इत्याद्युक्तविशेषण-विशिष्टनित्यनैमित्तिक कर्मानुष्ठाननिरतस्य धार्मिकस्यापि क्रमेलकस्य काश्यां गृहागतबुभुक्षुभिक्षाकब्राह्मणभर्त्सनताडनादितिरस्कारमात्रेण कालान्तरे मणिकर्ण्यामर्धोदकमृतस्याप्यतिदुःसहा भैरवयातनाभूत्। तस्मात् काश्यामल्पमपि पातकं न कार्यमिति।

तथा धर्मेश्वरसमीपस्थानेकपापकारिणः काशीमृतस्यापि

हिरण्यगर्भनाम्नः पाशुपतस्य त्रयस्त्रिंशद्सहस्त्रवर्षमिता कालभैरव-यातनाऽभूदिति ब्रह्मवैवर्त्ते पञ्चविंशेऽध्याये कथा।।

इस प्रसंग में एक प्राचीन इतिहास को उदाहरण रूप में प्रस्तुत करते हुए महर्षि भृगु ने 'क्रमेलकोपाख्यान' सुनाया है। उसका यह आशय है कि 'धर्मात्मा, ब्राह्मणभक्त, दयालु, अनसूयकादि विशेषताओं से विभूषित नित्यनैमित्तिक-कर्मानुष्ठाननिरत-परमधार्मिक 'क्रमेलक' द्वारा काशी में गृहागत भूखे भिक्षुक ब्राह्मण की भर्त्सना ताडन-तिरस्कार मात्र से कालान्तर में मणिकर्णिका में आधे जल में मृत होने पर उसको अत्यन्त दु:सह भैरव यातना भोगनी पड़ी तात्पर्य यह है कि काशी में अल्पतम पाप भी नहीं करना चाहिए। तथा, धर्मेश्वर के समीप रहने वाले, बहुत पाप करने वाले हिरण्यगर्भ नामक 'पाशुपत' को काशी में मरने पर भी तीस हजार वर्षों तक कालभैरव की यातना भोगनी पड़ी। यह कथा ब्रह्मवैवर्त्तमहापुराण के पचीसवें अध्याय में है।।४५।।

तथा तत्रैव-

सूत काश्यामृणं कृत्वा काश्यामेव म्रियेत यः।
का गतिस्तस्य कथय ऋणहा नैव मुच्यते।।४६।।

सूत- **धार्मिकस्त्वृणभीतो यो म्रियेतात्र प्रमादतः।**
स सद्यो मुक्तिमाप्नोति ऋणी तस्य च शङ्करः।।४७।।

ऋणं बहुगुणं तस्मै ददाति भगवान् हरः।
स्वयमंगीकृत्य ऋणं तारकं प्रदिशत्यलम्।।४८।।

कुटुम्बभोगकीर्त्यर्थमृणं कृत्वा विमुच्यति।
स पापात्माऽशुद्धतनुर्यातनाः प्रतिपद्यते।।४९।।
अतः सर्वैरुपायेर्हि ऋणशुद्धिः समीहिता।।

ऋषियों ने 'सूत' से पूछा कि काशी में ऋण करके जो काशी में ही मर जाता है उस ऋणी की मुक्ति नहीं होती। सूत जी उत्तर में कहते हैं कि धार्मिक व्यक्ति ऋण से भीत होकर प्रमाद के कारण मर जाता है तो वह

सद्यः ही मुक्ति प्राप्त कर लेता है। भगवान् शङ्कर स्वयं उसका ऋण अपना ऋण समझ कर तारकमन्त्र का उपदेश कर देते हैं तथा उसके ऋण को बहुगुणित करके चुकता कर देते है। जो व्यक्ति कुटुम्ब के योग एवं कीर्त्ति के लिये ऋण लेकर मोहग्रस्त होकर मर जाता है वह पापात्मा, अशुद्ध देह, यातना प्राप्त करता है। अतः सभी प्रयास करते हुए ऋण शोधन नितान्त अपेक्षित है।।४६-४९।।

तथा- **वक्ता परुषवाक्याणां मन्तव्यो नरकागतः।।५०।।**
सन्देहो न मुनिश्रेष्ठाः पुनर्यास्यति यातनाम्।
परापवादी पापात्मा सर्वपापकृदध्रुवः।।५१।।
पच्यते नरके सोऽपि महापातकिभिः सह।

तथा- **धनाद्यर्थं तु यो मूर्खो मिथ्यावादं करोति च।।५२।।**
तस्याऽऽशु सुकृतं याति नरकं च प्रपद्यते।
अनृतं न वदेत् प्राज्ञः प्राणैः कण्ठगतैरपि।।५३।।
कौतुकेनापि हि मतिमान् स्वैरहास्येष्वपि क्वचित्।
अनृतं सर्वपापानां पात्रं तस्मिन् हि संचिते।।५४।।
पापराशिस्तु सुमहान् जायते वर्धतेऽपि च।
बहुनात्र किमुक्तेन पापराशिरनन्तकः।।५५।।
दुःखप्रदोऽतो भवति नानृतात् पातकं परम्।
पुराणेषु पृथग्गीतं नानाख्यानैरनेकशः।।५६।।
अनृतं नैव वक्तव्यमनृतात् सुकृतं क्षरेत्।

कटुवाणी बोलने वाला प्राणी नरक से आया है ऐसा मानना चाहिए। हे मुनिसत्तमों! निःसन्देह वह पुनः नरक में ही जाएगा। दूसरों की निन्दा करने वाला पापी सभी पापों को सम्पादित करने वाला तथा चञ्चलमति वाला होता है। वह महापातकियों के साथ ही घोर नरक में पचाया जाता है। सभी पापों का पात्र है जिसमें उसका अनृत संचित रहता है। उसका पाप समूह महान् है। जो उत्पन्न होता तथा संचित होता रहता है। बहुत

क्या कहें? उसका पापसमूह अनन्त है। वह बहुत दुःखदायी है। अनृत से बढ़कर दूसरा पाप नहीं है। सत्य से श्रेष्ठ कोई तप नहीं है। पुराणों में अनेक उदाहरणों से स्वतन्त्र रूप से सिद्ध किया गया है कि अनृत भाषण नहीं करना चाहिए। अनृत से पुण्य नष्ट होता है॥५०-५६॥

मात्स्ये-**कामः क्रोधोऽतिलोभश्च दम्भस्तम्भोऽथ मत्सरः।५७।**

निद्रा तन्द्रा तथालस्यं पैशुन्यमिति ते दश।

अविमुक्तस्थिता विघ्नाः शक्रेण विहिताः स्वयम्।५८।

विनायकोपसर्गश्च सततं मूर्ध्नि तिष्ठति।

पुण्यमेतत् भवेत्सर्वं भक्तानामनुकम्पया॥५९॥

स्तम्भो = गर्वः। तथा काश्यां भिक्षार्थमटता व्यासेन भिक्षायामलब्धायाम्-

मास्तु त्रिपुरुषी विद्या मास्तु त्रिपुरुषं धनम्।

मास्तु त्रिपुरुषं सख्यं व्यासो वाराणसीं शपत्॥६०॥

इत्येवं शापे दत्ते विश्वेश्वरेण भवान्या भिक्षां दापयित्वोक्तम्-

इह क्षेत्रे न वस्तव्यं क्रोधनस्त्वं महामुने।

तथा- **द्वैपायन बहिर्याहि नात्र स्थेयं मनागपि॥६१॥**

रागद्वेषार्त्तचित्तानां निवासाय न मे पुरी।

अवैमि त्वां महाबुद्धे मदेकशरणं मुने॥६२॥

अतो ब्रवीमि मत्क्षेत्रान्नातिदूरे व्यवस्थितः।

मामाराधय निष्कामः सततं मत्परायणः॥६३॥

ततो रागादिभिर्मुक्तो मत्पुरे स्थास्यसि ध्रुवम्।

एवमुक्तो भगवता व्यासोऽन्तेवासिभिः सह॥६४॥

पालयन् शङ्कस्याज्ञां बहिरेवावतिष्ठते।

तस्माद्रागादिहीनैः सा सेव्या मुख्याधिकारिभिः॥६५॥

मत्स्य महापुराण के अनुसार काम, क्रोध, अतिलोभ, अहंकार-

पाखण्ड-मात्सर्य-निद्रा-तन्द्रा-आलस्य-चुगलखोरी, ये दश दोष अविमुक्त-क्षेत्रनिवासी के लिये स्वयं देवराज इन्द्र द्वारा निर्मित हैं। गणेशजी के गणों द्वारा उपस्थापित विघ्न सदैव शिर पर मँडराते रहते हैं। किन्तु ये सब आप की अनुकम्पा से पुण्य में परिवर्त्तित हो जाते हैं। व्यास ने काशी में भिक्षा हेतु भ्रमण करते हुए भिक्षा प्राप्त न होने पर काशी से कहा-

"विद्या तीन पीढी तक नहीं होगी। धन भी तीन पीढ़ी तक नहीं होगा। तीन पीढ़ी तक मैत्री भी नहीं होगी।"

इस प्रकार शाप देने पर विश्वेश्वर ने भवानी के द्वारा व्यास को भिक्षा तो दिलवा दिया किन्तु कहा-

'इस अविमुक्तक्षेत्र में मत रहो। हे महामुने!! आप क्रोधी हो तथा पुनः शिव ने व्यास से कहा-

'द्वैपायन!! आप काशी से बाहर चले जाओ। यहाँ काशी में क्षण भर भी मत रुको। मेरी पुरी में राग द्वेष से आक्रान्त मानसिकता वालों को कोई जगह नहीं है। मैं जानता हूँ कि आप मेरे एकनिष्ठ शरणागत हैं। अतः मैं आदेश के रूप में कह रहा हूँ कि हमारे क्षेत्र से अत्यन्त सन्निकट रहते हुए निष्कामभाव से मेरी आराधना करो। रागादिदोषरहित हो जाने पर आप मेरी पुरी में स्थिर भाव से रह सकोगे। शिव के ऐसा कहने पर अपने शिष्यों के साथ शङ्कर की आज्ञा का पालन करते हुए व्यास जी काशी क्षेत्र से बाहर ही रहते हैं। अतः रागादि रहित होकर ही काशी में वास करना चाहिए।।५७-६५।।

पद्मपुराण में जनक के प्रति याज्ञवल्क्य का कथन है-

एवं यदा महेशेन प्रजासंरक्षणार्थिना।

स्वयम्भुवा नोदितेन नियमः परिकल्पितः।।६६।।

तदैव राजन् सर्वेषां मुनीनामपि बुद्धिषु

रागद्वेषभयोद्वेगप्रमादालस्यकामिताः।

प्रादुरासन् समात्सर्यास्तत्त्वज्ञानविरोधिनः।।६७।।

इस प्रकार जब प्रजासंरक्षण हेतु ब्रह्मा को शिवजी ने प्रेरित किया तो उन्होंने नियम निर्धारित किया। उसी समय सभी मुनियों को भी बुद्धि में राग द्वेष भय उद्वेग प्रमाद आलस्य कामादि प्रादुर्भूत हो गये। ये सभी तत्त्व ज्ञान के विरोधी है।।६६-६७।।

ततः केचिद् भयोद्विग्ना वृथा भीताश्च केचन।
तत्यजुः काशिकां विप्राः केचिद् द्रोहमथाचरन्।।६८।।
अन्योन्यमात्सर्ययुताः कलिप्रोत्सुकबुद्धयः।
बभूवुर्मुनयः केचित् केचित्कामपरा भवन्।।६९।।

तत्पश्चात् कुछ मुनि भय से उद्विग्न हो गये, कुछ लोग व्यर्थ के भय से आक्रान्त हो गये। कुछ लोगों ने काशी का त्याग भी कर दिया। कुछ लोग विद्रोह करने लगें कुछ लोग परस्पर ईर्ष्यादि ग्रस्त हो गये। लोगों की बुद्धि में कलि का प्रवेश हो गया। कुछ लोग तो कामाक्रान्त भी हो गये।।६८-६९।

इत्थं व्याकुलिताः सर्वे संहत्योचुःपरस्परम्।
त्यजामः काशिकां शीघ्रं विघ्ना नः सम्भवन्ति हि।।७०।
यद्यपीह सुलभ्यं तन्निर्वाणं मुनिसत्तमाः।
तथापि रागद्वेषादिर्बाधते मानसानि नः।।७१।।
रागादिषु च जातेषु पापमेव समेधते।
अस्मिन् क्षेत्रे कृतं पापं स्वल्पं चापि महद् भवेत्।।७२।।
तस्मादन्यत्र कर्माणि करिष्यामो यथाविधि।
अन्तःकरणशुद्ध्यर्थं ततस्तत्त्वं स्फुरिष्यति।।७३।।
विचार्यैवं गताः सर्वै मुनयः संशितव्रताः।
वाराणसीं विहायैव नानातीर्थानि संश्रिताः।।७४।।

इस प्रकार सभी क्षुब्धमुनि संगठित होकर परस्थर कहने लगे कि हमें अब काशी त्याग देनी चाहिए। क्योंकि बहुत विघ्न हो रहे हैं। यद्यपि यहाँ निर्वाण सुलभ है फिर भी रागद्वेष हमारे मानसों को बाधित कर रहा है।

रागद्वेष के कारण पाप ही बढ़ता है। इस काशीक्षेत्र में किया गया स्वल्पतम पाप भी महत्तर हो जाता है। इसलिये हम अन्यत्र जाकर अन्त:करण की शुद्धि के लिये यथाविधि कर्म करेंगे। तभी सत्तत्त्वका स्फुरण होगा। इस प्रकार विचार करके सभी तपस्वी मुनिजन वाराणसी को त्याग कर अन्यान्य तीर्थों में चले गये।।७०-७४।।

बाद में-

काश्यां यो निजधर्मेण मुमुक्षुस्तिष्ठति द्विजः।
अनायासाविलम्बाभ्यां स एव लभते फलम्।।७५।।

पद्मपुराण में कहा गया है कि काशी में जो मनुष्य स्वधर्म का पालन करते हुए निवास करता है वह सहजता एवं शीघ्रता से मोक्ष रूप फल अवश्य प्राप्त करता है।।७५।।

ब्रह्मवैवर्त्ते- **काश्यां स्थित्वा हीन्द्रियाणां व्ययं नो।**
कुर्याद् यत्नात् सत्कृतं रक्षणीयम्।।७६।।
अन्तर्यामी प्रेरकः कारणानां-
सोऽयं द्विष्यादिन्द्रियैर्नाशितैर्हि।
अत्र स्वेच्छाचारदोषप्रणष्टा-
लोकाः कामाद् भ्रान्तिभाजो भवन्ति।।७७।।
तस्मात् सद्भिर्नात्र पन्था विरुद्धः।
सेव्यः सेव्यो वेदमूलो हि धर्मः।।७८।।

काशी में स्थित रहकर इन्द्रियों को अनावश्यक विषयों में प्रवृत्त नहीं करना चाहिए। सत्कर्मों की रक्षा करनी चाहिए। सृष्टि के कारकतत्त्वों के प्रेरक (पिण्डाभिमानियों के प्रेरक) अन्तर्यामी ईश्वर इन्द्रियों के नाश (मिथ्यायोग) से रुष्ट होते हैं। काशी में स्वैराचार दोषों से नष्ट प्राणी कामाक्रान्त होकर भ्रान्ति के पात्र हो जाते हैं। इसलिये आस्तिकों को श्रुतिस्मृतिपुराणप्रतिपादित धर्म का ही सेवन करना चाहिये। वेदादि सच्छास्त्रविरुद्ध मार्ग का सेवन नहीं करना

चाहिये। वेदमूलक धर्म ही उपास्य है- नान्यः पन्था विद्यतेऽयनाय। तभी मनु का उद्घोष है-।।७६-७८।।

तथा- **ये स्युःकाश्यां महाभागाः सत्यधर्मपरायणाः**

दानैर्व्रतैश्च नियमैः स्वाध्यायैश्चैव संयुताः।

तेषां कलिर्नप्रभवेत् विद्यमानोऽपि सर्वतः।।७९।।

काशी में जो लोग सत्यधर्मपरायण हैं, दानों व्रतों एवं स्वशाखीय वेद (मन्त्र- ब्राह्मणारण्यकोउपनिषदों) के अहर्निश स्वाध्याय में निरत हैं, उन्हें सर्वत्र व्याप्त रहते हुए भी कलि बाधित नहीं करता है।।७९।।

तथा- **पुत्रो भ्राता पिता वापि यः काश्यां पापमाचरेत्।**

त्याज्य एव स पापात्मा भवेत् संसर्गजाद् भयात्।।८०।

तथा- **गुरुद्रोहपरो यस्तु विप्रद्रोहरतस्तथा।**

न तस्य काशी सिद्ध्येत बहुभिः साधनैर्युता।।८१।।

तथा- **वाराणस्यां वसेद्यस्तु वृत्तिं यायावरीं चरेत्।**

अन्यन्न प्रतिगृह्णीयात् प्राणैः कण्ठगतै रपि।।८२।।

तथा-

काश्यां वसेद् धर्मपरो महात्मा न वित्तकामादिपरः कदाचित्।

वित्तं पुरा दैवकृतं तु यावत् तावद् भवत्येव न चात्र वादः।८३।

पुत्र भाई पिता जो कोई भी काशी में पापाचरण करता है उसे त्याग देना चाहिए। क्योंकि संसर्ग से भय होता है। गुरुद्रोह तथा विप्रद्रोह में तत्पर मनुष्य को सर्वशः धर्मसम्पन्न होने पर भी काशी सिद्ध नहीं होती। वाराणसी में रहने वाले को चाहिए कि वह यायावरी वाले भ्रमणशील वृत्ति ग्रहण करें। प्राणान्त की स्थिति होने पर भी कुछ भी प्रतिग्रह न स्वीकार करें। काशी में महात्मा को धर्मपर होकर रहना चाहिए। अर्थकामतत्पर होकर नहीं रहना चाहिए। पूर्वजन्म में जो भाग्यानुसारी धन है वह तो जितना प्राप्य है, प्राप्त होगा ही। इसमें कोई सन्देह नहीं है।।८०-८३।।

तथा- **अहर्निशं वित्तचिन्तातुराणाम्।**

कलत्रपुत्राप्तगृहादिभाजाम् ।।८४।।

विजृम्भते न परं काशिसौख्यम्।

यदर्थमास्ते सहरिर्गिरीशः।।८५।।

सहरि = हरिसहितः।

रातदिन धन की चिन्ता से व्याकुल स्त्री पुत्र गृह आदि से पूर्ण होने पर भी काशी का आनन्द प्राप्त नहीं होता। जिस आनन्दहेतु विष्णु के साथ शङ्कर भी काशी में सदा विद्यमान रहते हैं वहीं परमानन्द है। वह स्त्री पुत्र वित्तादि चिन्तातुर मनुष्य को कभी प्राप्त नहीं हो सकता। वही आनन्दवन का परम सुख है जिससे वह वंचित ही रहता है।।८४-८५।।

तथा- **गङ्गास्नानं विश्वनाथानुवृत्तिः।**

तत्तत्तीर्थस्नानदेवार्चनानि ।।८६।।

दानं शक्त्या सत्कथा सत्प्रसङ्गः।

पापत्रासः कीर्त्तनं शम्भुनाम्नाम्।।८७।।

कुर्यादेवं क्षेत्रमध्यस्थितो वा।

नो चेत् तीव्रा यातना भैरवी स्यात्।।८८।।

कृते काश्यां ज्ञाननिष्ठाः वसन्ति।

त्रेतायां ते यज्ञदानप्रधानाः।।८९।।

पूजादानं द्वापरे तु प्रकुर्वन्।

तिष्ये दानं केवलं मोक्ष हेतुः।।९०।।

तथा- **कलौ न काशी वसतिः स्थिरा भवेत्।**

पापात्मनां दण्डपाणिप्रभावात्।।९१।।

ममाज्ञया दण्डपाणिः शुभात्मा।

ह्युद्वासयिष्यत्यथ पापकर्त्तॄन्।।९२।।

गङ्गास्नान, विश्वनाथ की अनुवृत्ति, नियततीर्थों में स्नान, देवार्चन, यथाशक्तिदान, सत्कथाश्रवण, सज्जनों का संग, पापों से भय, शिवनाम सङ्कीर्तन, इस क्रम से काशीवासी को आचरण करना चाहिए। अन्यथा तीव्रतरी भैरवी यातना भुगतनी पड़ेगी। सत्युग में काशी में ब्रह्मात्मैक्यज्ञाननिष्ठ रहते हैं। त्रेता में यज्ञ एवं दान प्रधान जन रहते है। द्वापर में पूजा एवं दान करते हुए काशी में रहते हैं। कलियुग में दान ही मोक्ष का हेतु है। कलियुग में काशी में स्थिरवास नहीं हो पाता। क्योंकि पापियों पर दण्डपाणि भैरव का कोप रहता है। मेरी आज्ञा से पवित्रात्मा दण्डपाणि भैरव पापियों को काशी से निष्कासित करते है॥८६-९२॥

तथा- **काशीस्थाश्च जनाः सर्वे शिवविष्णुस्वरूपिणः।**
तस्मात् काशीजनान्नैव दूषयेदपि पापिनः॥९३॥
न धर्मः काशिजनतासेवनात् सुभगः परः।
न पापं काशिलोकानामपराधादतः परम्॥९४॥

तथा- **निन्दकानां सुखं धर्मस्तपः सत्यं दयाऽभयम्।**
तीव्रव्रततपोदानविद्यादि च निरर्थकम्॥९५॥

काश्यां वसतां गंगोदकेन शौचाद्यशुचिकर्मकरणेऽपि न दोषः-

तत् क्षेत्रमासाद्य ममाविमुक्तम्।
गङ्गोदकोपात्तसमस्तकार्यैः॥९६॥

काशी में रहने वाले सभी प्राणी शिव एवं विष्णु स्वरूप हैं। इस कारण काशी में रहने वाले पापियों की भी निन्दा नहीं करनी चाहिए। काशी में निवास करती जनता की सेवा से श्रेष्ठ सौभाग्य तथा अन्य धर्म नहीं है। काशीवासियों के प्रति किये गये अपराध से बढ़कर कोई पाप नहीं है।

तथा दूसरों की निन्दा करने वालों के सुख, धर्म, तप, सत्य, अभय, तीव्रव्रत, तप, दान, विद्या आदि निरर्थक अर्थात् निष्फल हैं।

काशी निवासी जनों की गङ्गाजल से शौचादि कर्मों का सम्पादन दोषावह नहीं है। शङ्कर का स्पष्ट कथन है- अविमुक्त क्षेत्र में आकर गङ्गा से ही समस्त क्रियाओं का निष्पादन करना चाहिए।

॥ साम्ब शिवार्पणमस्तु ॥

सम्पादक परिचय

प्रस्तुत दुर्लभ ग्रन्थ के यशस्वी सम्पादक श्री नितिन रमेश गोकर्ण कुशल प्रशासक के रूप में विगत ३० वर्षो से अपनी महनीय सेवाएं प्रदेश एवं केन्द्र सरकार को देते आ रहे है। साधारण होते हुए भी असाधारण व्यक्तित्ववाले श्रीगोकर्णजी को शानदार तीन सत्र काशी में सेवा करने का श्रेय प्राप्त है। काशी के प्रति स्वाभाविक स्नेह ने इन्हें काशी रहस्य के अन्तस्तल तक पहुंचाने की दिशा में 'काशी सर्वप्रकाशिका' ने इन्हें मार्ग दर्शन कराया और यही से इनमें इस कार्य को पूर्ण करने की प्रेरणा प्राप्त हुई।

यथार्थतः पद के अनुरूप इनका गौरव है। मण्डल प्रमुख पद के दायित्व निर्वहन के साथ ही साथ काशी से सम्पृक्त ऐसा कोई विषय नही है जो इनसे अछूता हो। काशी में ये बसे है और काशी इनमें बसी है, कोई अत्युक्ति नहीं है। प्रशासन के व्यस्त क्षणों में से समय निकालकर काशी को आत्मसात् करना ही इनका लक्ष्य है।

श्रीगोकर्णजी सन १९८७ वैच के आई.पी.एस्. एवं १९९० बैच के आई.ए.एस्. अधिकारी है। **भजविश्वनाथम्** इनकी प्रथम कृति स्वतः में काशी के ऐतिह्य का विशाल भण्डार है। सम्प्रति दूसरी कृति **काशीसर्वप्रकाशिका** काशीरसपानेच्छु सद्भक्तों के करकमलों में सादर प्रस्तुत है।

-प्रकाशक
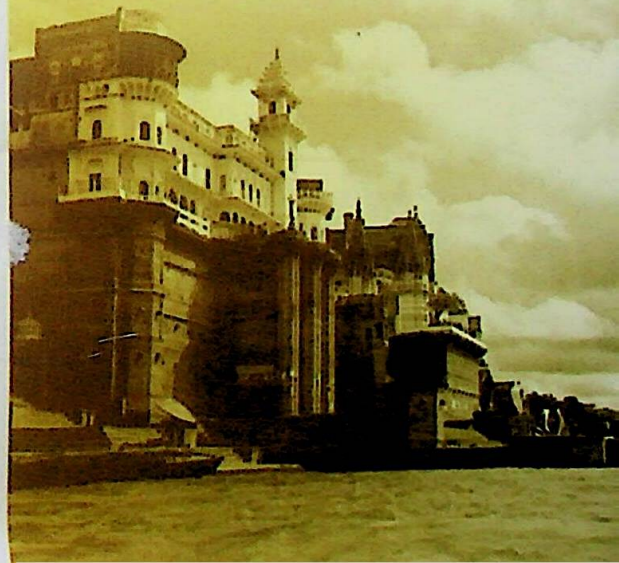
शारदा संस्कृत संस्थान

जगतगंज, वाराणसी-221 002

फोन : (0542) 2204168 (संस्थान) 2452037 (आवास)

e-mail: sharadabhawan@yahoo.co.in

website: www.sharadasansthan.in

सन् २०१७ मूल्य-४००.००